चन्दामामा
फ़रवरी १९८३
J 28

नन्हा टिम और उसका 'चॉकलेटवाला' झोला
'पु' के देश में एक विशालकाय राक्षस था. उसका नाम था बिन-जो। गांव के सारे बच्चे उस राक्षस से डरते थे क्योंकि बड़ा ही दुष्ट राक्षस था. बिन-जो गांववालों को तरह-तरह से सताता था. इसलिए एक दिन सारे गांववालों ने इकट्ठे होकर यह फैसला किया कि क्यों न नन्हें टिम को बुलाया जाए जो उन्हें इस मुसीबत से छुटकारा दिलाए। नन्हा टिम नदी के उस पार रहता था जो अपनी बहादुरी और अक्ल के लिए जाना जाता था. गांववालों को दुष्ट राक्षस के पंजे से छुड़ाने के लिए टिम, पु के देश में आ पहुंचा. दानव से निपटने की तैयारियां शुरू कीं. अपनी तलवार की धार तेज़ की और झोली में भर लीं ढेर सारी रावलगांव स्वीट्स, टॉफी और एक्लेअर्स! क्योंकि यही तो थीं उसकी मनपसंद चॉकलेट...जो उसमें नयी ताकत और नया विश्वास जगाती थीं। रात सोने से पहले उसने एक्लेअर्स खाई और सुबह टॉफियों का स्वाद लेकर निकल पड़ा बिन-जो का मुकाबला करने. उधर बिन-जो को इन्तज़ार था नन्हें टिम का...जैसे ही उसने छोटे से टिम को देखा, ज़ोरदार अट्टहास करके उसने कहा-
"तो ये चींटी सा नन्हा बच्चा मेरा मुकाबला करेगा?" फिर अचानक उसकी नज़र टिम के चॉकलेट वाली झोली पर पड़ी.
"इस झोली में क्या है?"— दानव ने पूछा. "खाना।"— टिम ने कहा और फौरन दौड़ पड़ा. "यह झोला मुझे दे दो!"— राक्षस यह कह टिम के पीछे-पीछे भागा.
टिम ने झटपट एक रावलगांव चॉकलेट निकालकर दैत्य की तरफ उछाल दी. जैसे ही राक्षस चॉकलेट लेने नीचे झुका टिम ने तलवार राक्षस की पीठ से लगा दी. राक्षस गिड़गिड़ाने लगा— "मुझे मत मारो!" टिम ने कहा— "तो वादा करो कि आज के बाद गांववालों को कभी नहीं सताओगे!" "मैं वादा करता हूं पर तुम भी वादा करो कि हर सप्ताह ऐसी ही स्वादिष्ट चॉकलेटों का झोला मुझे ला दोगे... इनका मज़ेदार स्वाद तो मेरी ज़बान पर रह गया है और मैं तो हमेशा भूखा ही रहता हूं!"— कहकर बिन-जो टिम की तरफ आशा से देखने लगा. टिम ने हामी भर दी. बस खत्म हो गया उस दिन से दुष्ट राक्षस के अत्याचार का सिलसिला. गांववालों ने उस रात खुशी में एक शानदार जलसा किया जिसमें बिन-जो को भी बुलाया गया.
स्वीट्स
रावलगांव
स्वीट्स, टॉफी व एक्लेअर्स
उत्तमता का स्वाद

पुरस्कार जीतिए

कॅमल

पहला इनाम (१) रु. १५/-
दूसरा इनाम (२) रु. १०/-
तीसरा इनाम (१०) रु. ५/-
१० प्रमाणपत्र
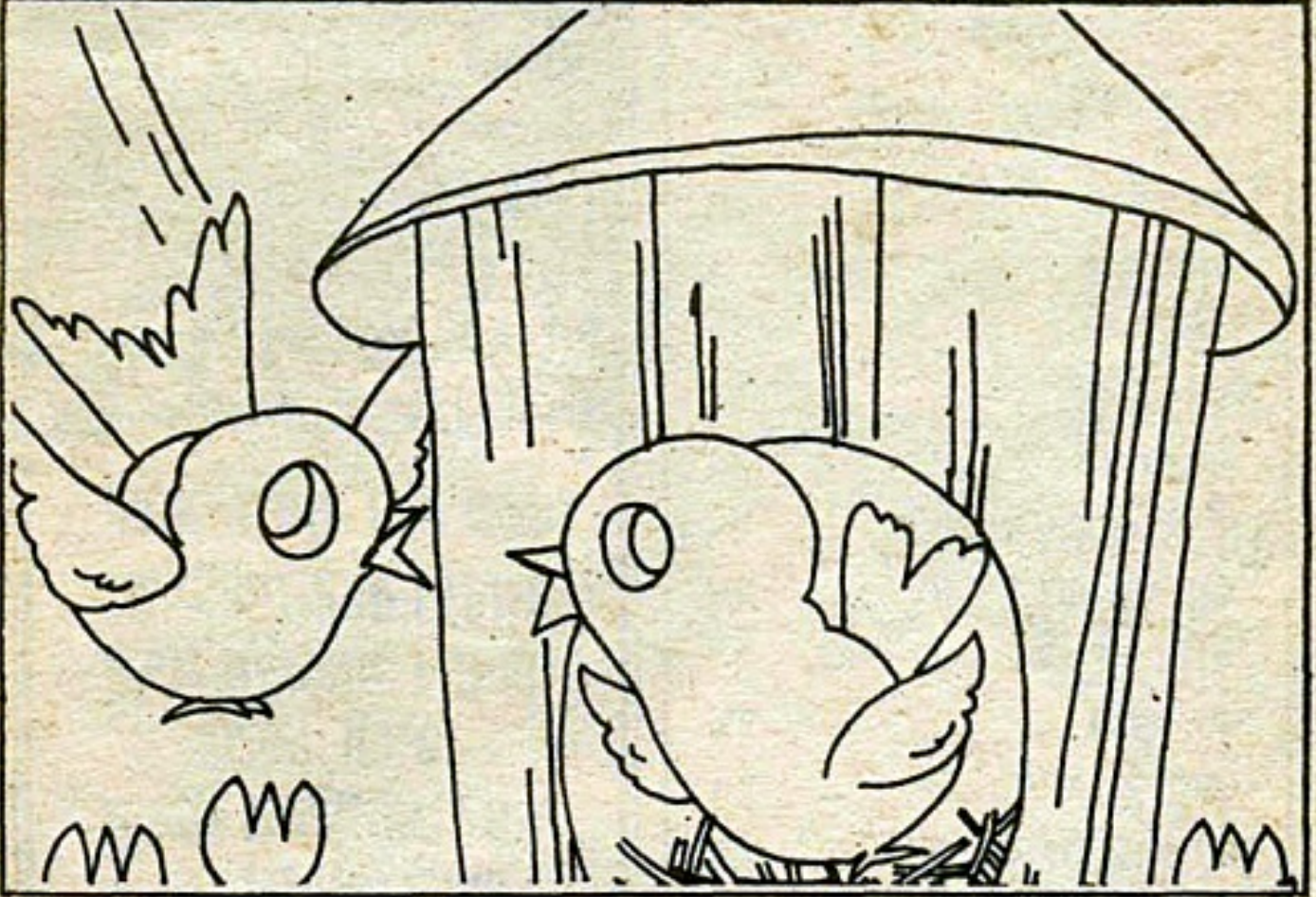
इस प्रतियोगिता में १२ वर्ष की उम्र तक के बच्चे ही भाग ले सकते हैं. ऊपर दिये हुए चित्र में पूरे तौर से कॅमल कलर्स रंग भरिए और उसे निम्नलिखित पते पर भेज दीजिये :

चंदामामा, पो. बॉ. नं. ६६२८, कुलाबा, बम्बई ४०० ००५.

जजों का निर्णय अंतिम और सभी के लिए मान्य होगा. इस विषय में कोई पत्र-व्यवहार नहीं किया जायेगा.

कृपया कूपन केवल अंग्रेजी में भरिए.

Name: .... Age: ....

Address: ....

....

प्रवेशिकाएं 28-2-1983 से पहले पहले भेजी जायें.

CONTEST NO 28

Vision HIN

चन्दामामा

फ़रवरी 1983

विषय-सूची

एक प्रति : १-७५

वार्षिक चन्दा : २१-००

A burst of frolic!
NP
007
BUBBLE GUM
THE IX ASIAN GAMES NEW DELHI 1982
Treat yourself to NP 007 bubble gum. Savour its delicious flavour and revel endlessly with its bubble-power. Bubble after bubble.
THE NATIONAL PRODUCTS,
Bangalore 560 032.
Pioneers in chewing gums and bubble gums.
Beware of spurious and inferior Bubble Gums.
Proven quality certified by
IS: 6747
ISI
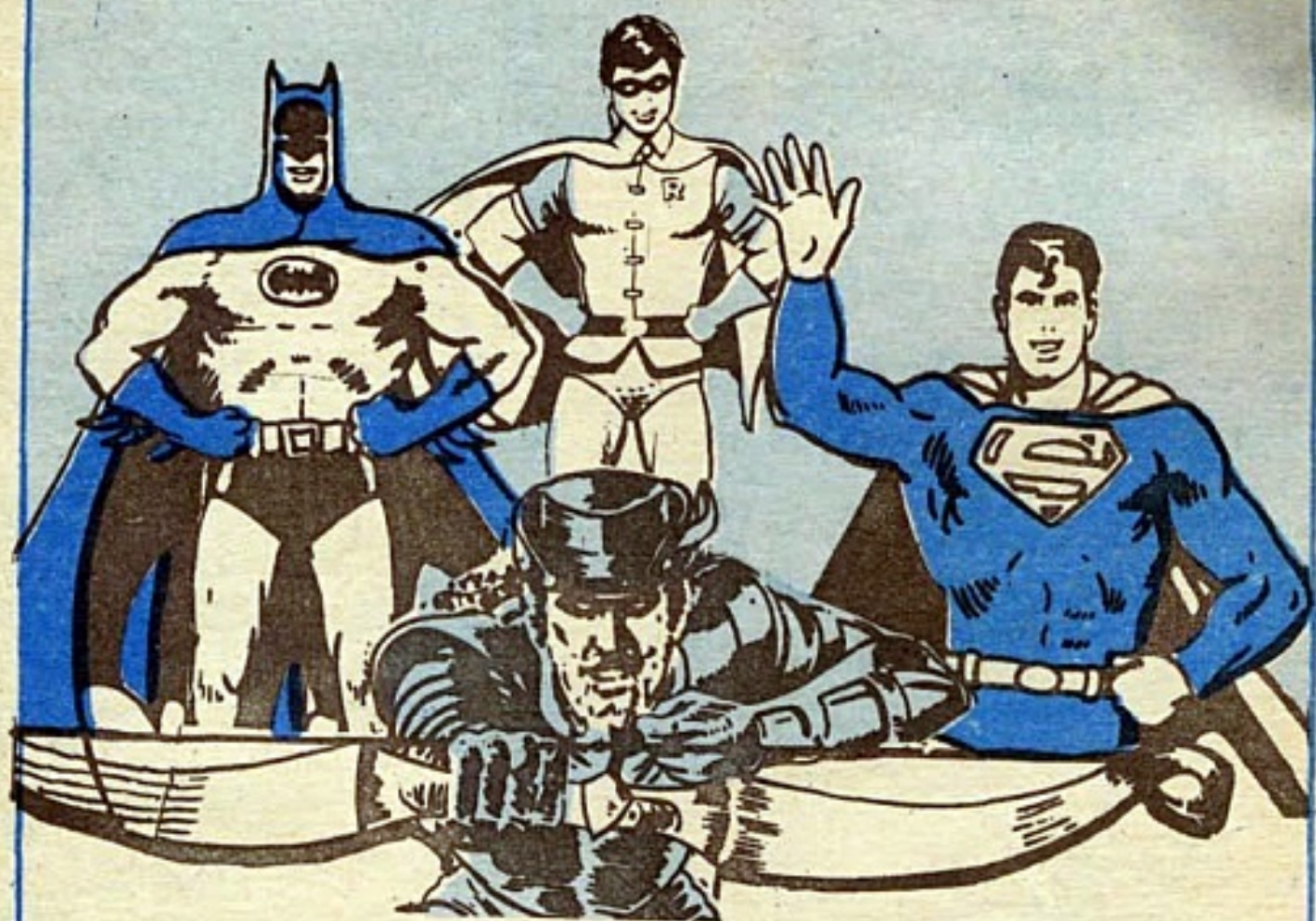
चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'

संचालक : नागिरेड्डी

"पंडित और मूर्ख" नामक कहानी हमें यह सीख देती है कि बड़े से बड़ा मूर्ख भी किसी संदर्भ में एक छोटी सी घटना के प्रभाव में आकर ज्ञानी बन सकता है! वह घटना उसके जीवन की धारा को ही बदल सकती है ।

अमर वाणी

द्विजिह्वो मानवः क्रूरः द्विजिह्वोवपि पन्नगात् ।
सर्पो हरत्येकमेव क्रूरस्तु कुल नाशकः ।।

[दो जीभों वाले सांप की अपेक्षा ऐसे ही लक्षणवाला मनुष्य ज्यादा क्रूर होता है। सांप तो डंसकर एक को ही मार सकता है, मगर क्रूर मानव सारे वंश के विनाश का कारणभूत बन जाता है ।]

वर्ष : ३५ फरवरी १९८३ अंक : ६

एक प्रति : १-७५ :: वार्षिक चन्दा : २१-००

बासी भात

गौरी बड़ी किफ़ायत करनेवाली औरत थी। खासकर वह पकाई गई कोई चीज़ फेंकना पसंद न करती थी। एक दिन उसने पड़ोसी कैलाश के परिवार को खाने पर बुलवा लिया। इसलिए काफी चीज़ें बनाईं। कैलाश वैसे पेटू था। मगर उस दिन कैलाश की तबीयत कुछ अच्छी न थी। इस वजह से वह पकवान ज़्यादा खा नहीं पाया। काफी चीज़ें बच गईं। मेहमानों के चले जाने पर गौरी का पति रामदास चिंता प्रकट करते हुए बोला–"अब हम ये सारी चीज़ें क्या करेंगे?"

"आप फ़िक्र क्यों करते हैं? मैं कुछ न कुछ उपाय करूँगी।" गौरी बोली।

रामदास अपनी पत्नी की किफ़ायती से अच्छी तरह से परिचित था। उसके मन में यह शंका पैदा हो गई कि उसकी औरत बची-खुची सारी चीज़ें कल उसी को खिलायेगी। दूसरे दिन नहा-धोने के बाद रामदास अपने पेट पर हाथ रखे कराहने लगा। गौरी ने घबड़ाकर पूछा–"यह तुम्हें क्या हो गया?" रामदास ने बताया कि उसके पेट में दर्द होने लगा है।

गौरी ने वैद्य को बुला भेजा। वैद्य ने रामदास की जांच करके पूछा–"तुमने कल रात को क्या खाया है?" रामदास ने सारी बात बता दी।

"ये चीज़ें तो हल्की हैं। इनके खाने पर पेट में दर्द नहीं होता। फिर भी कोई बात नहीं, मैं अभी घर जाकर दवा भेज देता हूँ। तुम आज दिन भर खाना-पीना बंद कर दो।" वैद्य ने समझाया।

गौरी वैद्य के वास्ते थाली में मिठाइयाँ ले आई। थाली हाथ में लिये बिना ही उन पदार्थों का रंग देख वैद्य संदेह में पड़ गया, फिर घबड़ाकर उठ खड़ा हुआ और

"वसुंधरा"

बोला–"देखो, बहन! मैं आज उपवास कर रहा हूँ, तुम बुरा मत मानो।"

"हूँ! वैद्यजी उपवास कर रहे हैं और तुम्हारी तबीयत खराब है। आखिर ये सारी चीजें कैसे खतम होंगी?" उदास होकर गौरी बोली।

"भूखे लोगों को बुलाकर खाना खिलाओ। कहा जाता है कि भूख स्वाद नहीं जानती, तुम्हारा पुण्य भी होगा।" रामदास ने सुझाया। गौरी घर के बाहर जाकर चबूतरे पर खड़ी हो गई। रास्ते से गुजरनेवाला मुखिये का नौकर उसे दिखाई पड़ा। गौरी ने पूछा–"अरे, तुम तो बड़े ही कमजोर मालूम होते हो! अभी तक तुमने कुछ खाया-पिया नहीं?"

"हाँ, माईजी! कल मेरे मालिक किसी बात को लेकर मुझ पर बिगड़ गये। मुझे दिन भर एक कोठी में बंद करके ताला लगाया। अभी अभी उन्होंने मुझे छोड़ दिया है।" नौकर ने अपना दुखड़ा सुनाया।

"उफ़! बेचारे! सुनो, मेरे घर में मिष्टान्न तैयार है! खाकर चले जाओ, आओ!" गौरी बोली।

गौरी बरामदे में पत्तल डालकर एक एक चीज परोसने लगी। इस बीच नौकर हड़-बड़ा उठ खड़ा हुआ और बोला–"माईजी, मेरे घरवाले यह सोचकर परेशान होंगे कि कल से मुझ पर क्या बीत रहा है? वे लोग हज़ार आँखों से मेरा इंतज़ार करते होंगे। आप मुझे कभी किसी दिन खिलायेगा।"

"यह क्या? मुखिये का नौकर कुछ खाये बिना चला गया।" गौरी ने पूछा।

"शायद उसे मालूम हो गया होगा कि तुमने जो चीजें परोसीं, वे कल की हैं। बासी हैं।" रामदास ने कहा।

"तो भी क्या हुआ? भूख स्वाद नहीं जानती है न?" गौरी ने टोका।

"भूख भले ही स्वाद नहीं जानती हो, पर उसकी गंध मालूम हो जाती है।" रामदास ने जवाब दिया। गौरी मकान की ड्योढी के पास पहुँची। एक भिखारी उधर

से गुजरते हुए बोला–"माई, मैं चार दिन से भूखा हूँ। मुट्ठी भर खाना दो।"

"अरे, मुट्ठी भर क्या? भर पेट खिला दूँगी। अन्दर आ जाओ।" गौरी बोली।

इस बार वह बची-खुची सारी चीजें एक पत्तल में डालकर ले आई और भिखारी के सामने रख दीं। उसकी बू के लगते ही भिखारी तनकर नीचे गिर पड़ा।

गौरी घबड़ा गई और अपने पति को यह खबर दी। रामदास ने सोचा कि भिखारी मर गया होगा। फिर वह पुरोहित के घर जाकर बोला–"पंडितजी, एक भिखारी मेरे घर आया, खाते-खाते मर गया। बताइये, क्या करना होगा?"

"यह कौन बड़ी बात है? अनाथ प्रेतों का दहन-संस्कार कराने पर बड़ा पुण्य होता है। घर में जो सारी चीजें बनी हैं मुझे दान कर दो।" पुरोहित झट से बोला।

इसके बाद पुरोहित रामदास के पीछे उसके घर चला आया, भिखारी को देख बोला–"अरे, क्या बात है? अभी से लाश में से बदबू निकल रही है।"

"अजी, यह लाश की बदबू नहीं, उसके सामने जो पदार्थ परोसे गये हैं, वे कल के बनाये हुए हैं।" रामदास बोला।

पुरोहित चौंककर बोला–"यह तो अनाथ प्रेत का संस्कार है। मुझे तो दान नहीं लेना है। यह भिखारी भूख से तड़पते हुए मर गया है। इसलिए घर में बनाये गये सारे पदार्थों को चिता में डलवा दो तो इसकी आत्मा को शांति मिलेगी।"

रामदास खुश होते हुए बोला–"पहले सारे पदार्थ चिता में डालकर तब इसको डाल दे तो अच्छा होगा न?"

ये बातें सुनकर भिखारी उठ खड़ा हुआ और यह कहते भाग गया–"इन पदार्थों को चिता में डाल दे तो फिर मुझ को आग में डालने की जरूरत नहीं पड़ेगी।"

पुरोहित को असली बात समझने में देर लगी। दर असल बात यह थी कि अपने घर बुलाकर खाना खिलानेवाली गृहिणी

बेतुके सवाल

एक राजा वक्त बिताने के लिए जब-तब अपने दरबारियों से बेतुके सवाल पूछा करते थे। उन सवालों में हास्य का तुक देकर जो दरबारी सब को हँसा देता था, उसे वे बढ़िया इनाम दिया करते थे। एक बार राजा ने दरबारियों के सामने यह सवाल रखा–"सभी चीजों के जैसे बाजार में अक्ल भी बिक जाय तो उस समय की हालत कैसी होगी ?"

एक दरबारी उठकर बोला–"महाराज, अगर बाजार में अक़्ल बिक जाने लग जाय तो हमारे देश में एक भी मूर्ख न होगा !"

दरबारी विदूषक को लगा कि राजा उस जवाब से संतुष्ट हो गये हैं, वह बोला– "महाराज, ऐसा कभी हो नहीं सकता ! चाहे भले ही देश के अंदर अक़्ल बिक जाय, मगर मूर्खों की संख्या घटेगी नहीं !" "सो कैसे ?" राजा ने पूछा।

"हर व्यापारी ज्यादा फायदे की बात सोचेगा। यदि अक़्ल को ख़रीदकर सारे मूर्ख अक़्लमंद बन जाये तो ऐसी हालत में अक़्ल को ख़रीदनेवाला कोई नहीं रह जाएगा। तब व्यापारी अक़्ल के नाम पर मूर्खों को और चीज़ बेच देगा। इसका नतीजा यह होगा कि मूर्ख मूर्ख ही बने रह जायेंगे !" विदूषक ने जवाब दिया।

"क्या खरीददार यह बात समझ न सकेगा कि वह जो कुछ ख़रीद रहा है, वह अक़्ल है या नहीं ?" दूसरे दरबारी ने पूछा।

"नहीं, क्योंकि अक़्ल ख़रीदने के लिए आनेवाले लोग ज्यादातर मूर्ख ही तो होते हैं !" विदूषक ने समझाया। यह जवाब सुनकर सारे दरबारी हँस पड़े। इस पर राजा ने विदूषक को बढ़िया इनाम दे दिया।

की बात को वह इनकार न कर सका और साथ ही उसे जो खाना परोसा गया, उसे भी वह खा नहीं पाया। इसलिए वह मृत आदमी जैसा पड़ा रहा, लेकिन जब चिता में जलाने की बात उठी, तब वह उठकर भाग गया। यह बात समझकर पुरोहित और रामदास जोर से हँस पड़े। गौरी का सिर लज्जा के मारे झुक गया।

वह गुस्से में आकर बोली—"क्या मैं खुद के वास्ते क़िफायत करती हूँ? मैं थोड़ा बचा लूं तो तुम्हारा ही फ़ायदा होगा। अगर तुम को इसमें मजाक़ सूझता है तो मैं अभी यह काम कर देती हूं।" यों कहते गौरी ने अपने पति की ओर क्रोध भरी नज़र से देखा, फिर सारे पदार्थ लाकर आग में डालकर लौट आई।

"सुनो गौरी, अब मेरा पेट दर्द जाता रहा। मुझे बड़ी भूख लगी है। जल्दी रसोई बनाओ।" रामदास बोला।

"ओह, तब तो तुम्हारी बीमारी भी नकली है।" गौरी खीझ उठी। पुरोहित यह सोचकर वहाँ से चुपचाप खिसक गया कि पति-पत्नी के झगड़े के बीच वह क्यों नाहक़ फँस जाये। उसी वक़्त वैद्य दौड़कर आ पहुँचा और बोला—"रामदास, दवा भेजने के लिए कोई आदमी दिखाई नहीं दिया। इसलिए मैं खुद ले आया हूँ।"

"वैद्यजी! अब दवा की कोई ज़रूरत नहीं है। इनकी बीमारी झूठ-मूठ की है।" इन शब्दों के साथ गौरी ने सारी कहानी वैद्य को बता दी।

"तब तो बड़ा अच्छा हुआ। उन सारे पदार्थों को तुमने आग में डाल दिया। इसलिए मैं भी अपना उपवास तोड़ बैठता हूँ। मुझ को भी खाना परोस दो।" वैद्य ने कहा।

"वाह, सब कोई एक दूसरे के चट्टे-बट्टे हैं।" यों खीझते हुए गौरी रसोई घर के अन्दर चली गई।

उस दिन से अगर रसोई की चीज़ें बच जातीं तो गौरी उसी वक़्त किसी को बुलाकर खिलाने लगी।

[१५]

[शिवदत्त तथा मंदरदेव ने उस द्वीप में एक विचित्र व्यक्ति को देखा। उसने बताया कि वह शमन द्वीप का निवासी है और समुद्रकेतु नामक एक समुद्री डाकू बारह साल पहले उसे वहाँ पर छोड़ गया है। इसके बाद जब सब लोग खाने बैठे, तब समुद्र के किनारे पर भयंकर चिल्लाहटें सुनाई दीं। बाद...]

शिवदत्त तथा मंदरदेव तलवार खींचकर चौकन्ने हो झाड़ियों के पीछे दुबकते नजदीक के समुद्र के तट की ओर चल पड़े। लेकिन उनके दो अनुचर पीछे रह गये। वज्रमुष्टि पेड़ों के नीचे रेंगते सब से पहले समुद्र के किनारे पर पहुँचा और उसके पीछे चले आनेवाले लोगों की ओर सावधानी बरतने की सूचना के रूप में हाथ हिलाया।

सब ने पेड़ों के पीछे से झांक कर समुद्र की ओर देखा। समुद्र के किनारे से एक हज़ार गज़ की दूरी पर नौकाओं के बीच लड़ाई हो रही थी! उस लड़ाई में कुल छे नावें भाग ले रही थीं। समुद्र में पहले ही हलचल मची हुई थी। तिस पर नावों के बीच टकराहट होने लगी। हथियारों से लैस कई सिपाही एक नाव से दूसरी नाव पर उछलते दुश्मन पर वार कर रहे थे।

वज्रमुष्टि ने शिवदत्त का ध्यान आकृष्ट करते हुए कहा–"श्रीमान जी, देखिये, वही समुद्रकेतु है! एक क्रूर और दुष्ट समुद्री डाकू है!"

शिवदत्त और मंदरदेव ने एक दूसरे की आँखों में देखा। शिवदत्त ने भांप लिया कि वह लड़ाई समुद्री डाकुओं और समुद्री व्यापार करने वाले वणिकों के दल के बीच हो रही है। वह सोचने लगा कि अब क्या किया जाना चाहिए? तभी एक डोंगी जैसी नाव बड़ी नावों से धीरे-धीरे दूर हट कर समुद्र के किनारे की तरफ़ बढ़ने लगी।

अचानक एक काले रंग का कुरूप व्यक्ति अपने दांतों से तलवार दबाये एक नाव के पाल पर आधी दूर तक रेंगता गया और वहाँ से तलवार घुमाते हुए चिल्ला उठा– "कालकेय की जय!" तब वह दूसरी नाव पर कूद पड़ा।

देखते-देखते लड़ाई जोर पकड़ने लगी। दोनों दलों के कुछ सिपाही हाथ और पैरों के कट जाने की वजह से नावों पर से समुद्र में गिरने लगे। अपने शिरस्त्राण में एक सींग धारण किया हुआ वह कुरूप व्यक्ति भयंकर रूप से चिल्लाते हुए एक नाव से दूसरी नाव पर उछलते-कूदते तलवार चला रहा था।

शिवदत्त और मंदरदेव अचरज में आ गये। उस छोटी सी डोंगी को किनारे की तरफ़ बढ़ते शायद लड़ाई करने वालों में से किसी ने देखा न होगा। वे लोग नावों पर हमला करते एक-दूसरे के सर काटने में ही तल्लीन थे।

थोड़ी देर बाद अचानक समुद्रकेतु की नजर उस डोंगी पर पड़ी, जो तट की ओर बढ़ रही थी, इस पर अपने साथियों को सचेत करते हुए वह चिल्ला उठा– "अरे! वे लोग भागते जा रहे हैं। तैरते जाकर उस डोंगी को रोक दो।"

समुद्रकेतु की चेतावनी के पाने की देर थी, दूसरे ही क्षण समुद्री डाकुओं के दल के

कुछ लोग उछल कर समुद्र में कूद पड़े और तेजी के साथ डोंगी की तरफ़ तैरते जाने लगे। उनके पीछे कुछ लोग समुद्र में कूद पड़े और तैरने वाले डाकुओं का पीछा करते तलवार खींच कर उनसे जूझ पड़े।

देखते-देखते दोनों दलों के लोग पानी पर तैरते आपस में तलवारों से लड़ने लगे। कुछ लोग पानी में ही एक दूसरे से जूझकर हाथापाई करने लगे।

"यह लड़ाई बड़ी अजीब मालूम होती है। एक साथ दो काम हो रहे हैं। एक ओर पानी में तैर रहे हैं और दूसरी ओर दुश्मन का अंत करने की कोशिश कर रहे हैं...ऐसी लड़ाई मैंने कहीं नहीं देखी है?" मंदरदेव ने कहा।

शिवदत्त ने स्वीकृति सूचक सर हिलाया। उसकी दृष्टि कभी लड़ने वाली नावों की ओर और कभी किनारे की ओर बढ़नेवाली डोंगी की ओर पड़ने लगी। उन दोनों के बीच तैराकों में भी भयंकर लड़ाई हो रही थी।

धीरे-धीरे डोंगी किनारे के नजदीक आ पहुँची, किनारा अभी पांच-छे गज की दूरी पर ही था, तभी डोंगी में से दो औरतें पानी में कूद पड़ीं और जल्दी-जल्दी किनारे आ पहुँचीं। दूसरे ही क्षण समुद्रकेतु का

भयंकर स्वर सारे समुद्र में गूंज उठा। उसी वक़्त दो नावें किनारे की तरफ़ चल पड़ीं। उधर डूबने वाली दो बड़ी नावों में सफ़र करने वाले यात्री जान के डर से आर्तनाद करने लगे।

इस पर शिवदत्त बोला–"मंदरदेव! अब हमें प्रकट होना चाहिए! भागने वाली औरतों का परिचय हमारे लिए अनावश्यक है। यदि हम तुरंत उस समुद्री डाकू समुद्रकेतु का सामना न कर पाये तो वह उन दोनों औरतों का खात्मा कर सकता है।"

इसके बाद मंदरदेव ने पीछे मुड़कर देखा, उसे तीन सैनिक और वज्रमुष्टि मात्र

दिखाई दिये। इस पर मंदरदेव यह सोचकर घबरा गये कि कहीं वे खतरे में फंस तो नहीं गये, फिर उसने घबराहट भरे स्वर में एक सैनिक से पूछा–"बाकी दोनों सैनिक कहाँ?"

"सरदारजी, वे दोनों रसोई के पास ही रह गये!" सैनिक ने पीछे मुड़कर देखते हुए जवाब दिया।

"तुम इसी वक़्त उन्हें यहाँ पर बुला लाओ।" मंदरदेव ने उस सैनिक को आदेश दिया।

सैनिक जब वहाँ से जाने को हुआ, तब शिवदत्त उसको रोक कर बोला–"मंदरदेव, हम सब कुल मिला कर आठ ही आदमी हैं। मगर समुद्रकेतु के लुटेरों के दल में पचास-साठ लोगों से ज़्यादा मालूम होते हैं। ऐसी हालत में अगर हम उनका सामना करना चाहते हैं, तो हमें एक उपाय करना होगा!"

मंदरदेव ने प्रश्नार्थक दृष्टि से शिवदत्त की ओर देखा। शिवदत्त ने समझाया–"समुद्रकेतु को हमारी संख्या का पता लगना खतरे से खाली नहीं है। इसलिए हम पांचों एक पेड़ की ओट में से भयंकर ध्वनि करते हुए इस तरह अचानक उन पर हमला करेंगे, मानो हम लोग सैकड़ों की संख्या में हैं। बाक़ी तीनों हम लोगों के जैसे चिल्लाते हुए पीछे से हमला कर बैठेंगे!"

मंदरदेव ने मान लिया। इस पर उस सैनिक को आदेश दिया गया कि रसोई के पास रहने वाले दोनों सैनिकों को भी यह खबर दे और वह उनके साथ मिलकर पीछे से लुटेरों पर हमला कर दे।

धीरे-धीरे समुद्रकेतु की नावें तट की ओर पहुँचने लगीं। समुद्री लड़ाई बंद हो चुकी थी। दो नावें डूब गईं थीं और बाक़ी दोनों पर समुद्रकेतु के अनुचरों ने क़ब्जा कर लिया और वे भी तट की ओर चल पड़े। उन्हें रास्ते में पानी पर तैरते लड़ने वाले उनके साथी दिखाई दिये, इस

पर उन्हें हाथ का सहारा देकर अपनी नावों पर खींच लिया और दुश्मन पर तलवारों का वार करते उनका वध करने लगे।

शिवदत्त उस भयंकर दृश्य को देख मंदरदेव से बोला–"मंदरदेव, ये लुटेरे आखिर सब का वध करते जा रहे हैं। मुझे ऐसा लगता है कि ये दुष्ट उन औरतों को भी प्राणों के साथ नहीं छोड़ेंगे। इसलिए अब उन औरतों को बचाने की जिम्मेदारी हमें अपने ऊपर लेना होगा।"

मंदरदेव ने सर हिलाकर कहा–"चलो, हम सब यहाँ से चले जायेंगे।" फिर दो क़दम आगे बढ़ाकर बगल में खड़े वज्रमुष्टि पर नज़र डालते बोला–"उफ़! वज्रमुष्टि एक दम बेहथियार है! इस बात पर अब तक हमारा ध्यान नहीं गया है! इसको खाली हाथ रखना खतरे से खाली नहीं है। कुछ तो इंतजाम हो जाना चाहिए।"

ये बातें सुन वज्रमुष्टि मुस्कुरा पड़ा और बोला–"महाशय, मेरे लिए आवश्यक तलवार तो मैं खुद पा सकता हूँ! हो सके तो मैं समुद्रकेतु का वध अपने ही हाथों से करना चाहता हूँ। आप लोग कृपया मेरी चिंता न करें।"

इसके बाद सब लोग वहाँ से चल पड़े। वज्रमुष्टि उस प्रदेश को अच्छी तरह जानता था। इसलिए आगे रह कर वह रास्ता दिखाने लगा। किनारे पर पहुँचने वाली औरतों ने एक बार मुड़कर समुद्र की ओर देखा और यह सोच कर घबड़ा गईं कि समुद्रकेतु उनका पीछा कर रहा है, तब तेजी के साथ वे घनी झाड़ियों की ओर दौड़ गईं।

इस बीच समुद्रकेतु की दो नावें किनारे लग गईं। उसने तलवार उठा कर कहा–"कालकेय की जय!" इसके बाद पानी में कूद पड़ा, मुड़ कर अपने अनुचरों की ओर देखते गरजकर बोला–"सुनो, स्वयंप्रभा की कोई हानि न हो, मगर उस बूढ़ी को तलवार के घाट उतार दो।"

समुद्रकेतु घुटने तक गहरे जल में चल कर किनारे आ पहुँचा। उसके पीछे बीस समुद्री डाकू भी किनारे पर आ गये। फिर वे सभी लोग उन घनी झाड़ियों की दिशा में चुपचाप चल पड़े जिस दिशा में वे दोनों औरतें भाग गई थीं।

उस दृश्य को देख शिवदत्त ने दृढ़ स्वर में अपना निर्णय सुझाया—"हमें किसी तरह से उस प्रदेश में पहले ही पहुँच जाना जरूरी है! उन घनी झाड़ियों के पास डाकुओं के पहुँचने के पहले ही हम लोग एक साथ चिल्लाते हुए उन पर हमला कर बैठेंगे, यही हम लोगों का अंतिम निर्णय है, यातो हमारी विजय होगी या हम वीर स्वर्ग को प्राप्त करेंगे।"

"अच्छी बात है! मराल देवी की जैसी कृपा!" यों कहते मंदरदेव ने तलवार उठा कर प्रणाम किया।

इसके बाद सब लोग घनी झाड़ियों के बीच घुस गये और तलवार खींचकर दुश्मन का सामना करने को तैयार हो गये। मगर भागकर जानेवाली औरतों की आहट उन्हें कहीं सुनाई न दी। इस पर मंदरदेव बोला—"शायद वे औरतें जंगल के और भीतर भाग गई होंगी।"

शिवदत्त सर चालन करते बोला—"अगर हम पहले समुद्री डाकुओं को यहाँ से भगा दें तो फिर उन औरतों की टोह लेना कोई मुश्किल की बात न होगी।" उधर समुद्रकेतु भी अपने अनुचरों के साथ धीरे-

धीरे घनी झाड़ियों की तरफ़ बढ़ने लगा। पर वज्रमुष्टि एक ऊँचे पेड़ पर रेंगकर जमीन की ओर झुकी एक डाल पर साँप जैसा लेट गया।

ज्यों ही समुद्रकेतु अपने अनुचरों के साथ उस पेड़ के नीचे आ पहुँचा, त्यों ही वह "जय काल केय की!" चिल्लाते बिजली की भांति डाकुओं के दल के बीच कूद पड़ा।

उसी वक्त "जय मरालदेव की!" नारा लगाते शिवदत्त और मंदरदेव अपने अनुचरों के साथ झाड़ियों के पीछे से बाहर कूद पड़े, फिर समुद्रकेतु पर हमला कर बैठे।

पल भर के लिए समुद्रकेतु चकित रह गया। इस बीच वज्रमुष्टि ने एक समुद्री डाकू के हाथ से तलवार खींच ली और सिंह जैसे गर्जन करते एक-दो डाकुओं के सर काट डाले।

समुद्रकेतु अब तक संभल चुका था। वह अपने साथियों में जोश भरते हुए चिल्ला उठा—"कालकेय की जय!" फिर अचानक शिवदत्त पर हमला कर बैठा। तब तक उसके थोड़े अनुचर घबराकर समुद्र की ओर भागने लगे थे।

इतने में दूसरी दिशा से तीन सैनिक भीकर गर्जन करते डाकुओं पर धावा बोल उठे; पर समुद्रकेतु जरा भी घबराया नहीं। वह शिवदत्त के साथ लड़ते हुए धीरे-धीरे पीछे की ओर बढ़ते अपने साथियों को उकसाने लगा—"सुनो, तुम लोग भागो

मत। डटकर दुश्मन का सामना करो। ये लोग आठ आदमियों से ज्यादा नहीं हैं।"

अपने नेता की पुकार सुनकर भागनेवाले उसके अनुचर लौट आये, फिर से हिम्मत बटोरकर शिवदत्त के सैनिकों पर हमला कर बैठे।

चार-पाँच मिनटों तक भयंकर लड़ाई हुई। वज्रमुष्टि को पाँच-छे डाकुओं ने घेर लिया। पर वह तलवारों के वारों से अपने को बचाते हुए दुश्मन के कुछ अनुचरों को घायल करने में सफल हुआ।

घायल हुए डाकू एक-एक करके चीखकर नीचे गिरने लगे। उनकी जगह दूसरे डाकू पहुँचकर लड़ने लगे।

शिवदत्त ने भांप लिया कि यह लड़ाई ज्यादा देर तक चल न सकेगी। वह अपने से छोटे और शक्तिशाली समुद्रकेतु के साथ लड़ते हुए समुद्र तट की ओर बढ़नेवाली नौकाओं पर नज़र डाले हुए था। उन नावों से दुश्मन के कुछ और अनुचर किनारे पर आ जायेंगे तो सब मिलकर उसके अनुचरों का अंत कर सकते हैं। इसलिए उसने अपने मन में निर्णय कर लिया कि अब पीछे लौटना ही उत्तम है। उसने यह भी सोचा कि वह जिन दो औरतों की रक्षा करना चाहता है, वे अब तक बड़ी दूर निकल गई होंगी और उनकी जान के लिए कोई खतरा न होगा।

आखिर शिवदत्त दुश्मन को घबड़ा देने के ख्याल से चिल्ला उठा—"मराल देवी की जय!" फिर समुद्रकेतु को अपने दायें पैर से लात मारी, इस पर वह पीछे की ओर गिरने को हुआ, लेकिन उसके फिर से संभलने के पहले ही शिवदत्त अपने अनुचरों को चेतावनी दे झाड़ियों की ओर दौड़ पड़ा। यह संकेत पाकर उसके अनुचर भी पीछे की ओर हट गये।

पलक मारने की देरी में शिवदत्त और उसके अनुचर अचानक लड़ाई बंद करके पेड़ों की ओट में भाग खड़े हुए।

(और है)

आश्रम-धर्म

दृढ़व्रती विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आये, पेड़ पर से लाश उतारकर कंधे पर डाल करके हमेशा की तरह चुपचाप मरघट की ओर चलने लगे, तब लाश में छिपे बेताल ने कहा–"राजन, आप से यह बात छिपी नहीं है कि हमारे समाज में राजा और महा राजाओं के प्रति जो आदर और इज्जत है, वह बड़े-बड़े, दार्शनिक, तत्व शास्त्री और साधू-सन्यासियों के प्रति भी होती है। लेकिन समाज की भलाई को लेकर उनके विचारों में भिन्नता ज़रूर होती है! कभी-कभी उनके विचार परस्पर विरुद्ध भी होते हैं। इसलिए मेरे मन में यह शंका होती है कि आप इस आधी रात के वक़्त बड़ी मेहनत के साथ यह जो जोखिम उठा रहे हैं, इसके पीछे किसी की प्रेरणा जरूर होगी! आपको इस मेहनत से राहत दिलाने के वास्ते में सहजानंद नामक

वेताल कथाएँ

थे। वे अपने राज्य के प्रधान नगरों पर शासन करने के लिए योग्य और शक्तिशाली अधिकारियों को नियुक्त करते थे।

एक बार रत्नगिरि के अधिकारी के बारे में राजा नंदिकेश्वर के पास कई शिकायतें पहुंचीं। जनता ने राजा से बिनती की कि राजगिरि का अधिकारी नाक़ाबिल है और उस नगर के चारों तरफ़ अराजकता फैली हुई है! वहाँ पर जो अन्याय और अत्याचार हो रहे हैं, उनके पीछे दुर्जय नामक एक दुष्ट का बड़ा हाथ है! वह महारानी के रिश्तेदारों में से एक है, इसलिए उसको क़ाबू में रखना नगर के अधिकारी के बूते के बाहर की बात है! अलावा इसके इधर कई दिनों से वह नगर का अधिकारी बनने की कोशिश में है!

मंत्री ने सोचा कि महारानी के रिश्तेदार दुर्जय के अत्याचारों के बारे में राजा को बता देना शायद मुसीबतों का कारण बन जाय, इस ख्याल से उन्होंने राजा को सलाह दी–"महाराज, राजगिरि नगर में एक नये अधिकारी को नियुक्त करना ज्यादा मुनासिब मालूम होता है! इस पद के लिए सब तरह से लायक़ युवक प्रताप है जो हमारे दरबार में ही है! क्या मैं उसको भेज दूं?"

एक तत्ववेत्ता की कहानी सुनाता हूँ! मेहर्बानी करके सुनिये!"

बेताल यों सुनाने लगा: पुराने जमाने में प्रवाल देश के मुख्य नगरों में राजगिरि एक था। उस नगर के बाहर सहजानंद नामक एक पंडित अपना आश्रम बनाकर अपने शिष्यों को तत्व शास्त्र और दर्शन शास्त्र पढ़ाया करते थे। वे अस्सी साल के बूढ़े हो चले थे। आश्रमवासी बनने के पहले वे प्रवाल देश के राज परिवार के प्रमुख गुरु थे। देश की जनता के मन में उनके प्रति बड़ी श्रद्धा और भक्ति थी।

प्रवाल देश का राजधानी नगर प्राकारपुर था। राजा नंदिकेश्वर एक कुशल शासक

राजा ने मंत्री की बात मान ली, इस पर मंत्री ने उसी वक़्त प्रताप को बुला भेजा और उसे बताया कि राजा ने उसे राजगिरि के प्रधान अधिकारी के पद पर नियुक्त किया है इसलिए वह तुरंत वहाँ पर चला जाय!

वैसे प्रताप के मन में मंत्री के प्रति बड़ी श्रद्धा व भक्ति थी, फिर भी इस नियुक्ति से उसके मन में बड़ी पीड़ा पहुँची। उसने सोचा कि उसके जैसे एक विश्वासपात्र व्यक्ति को राजधानी से हटाकर दूर के नगर में भेजने के पीछे मंत्री का हाथ जरूर होगा! यह गलत फ़हमी प्रताप के मन में पैदा हुई। साथ ही वह जिस नगर में पैदा हुआ है और पला-बढ़ा है, उसे छोड़कर जाने में उसे दुख भी हुआ। फिर भी राजा के आदेश का उसे पालन करना पड़ा, आखिर प्रताप अनिच्छा से ही सही, राजगिरि के लिए चल पड़ा। उसके रथ के आगे व पीछे दस घुड़सवार हथियारों से लैस होकर चल पड़े। चार-पाँच दिन बाद एक दिन सवेरे के वक़्त जब प्रताप का रथ राजगिरि के नजदीक़ पहुँचा, तब एक जगह पेड़ों के नीचे साधू सहजानंद को अपने शिष्य के साथ बातचीत करते देखा। साधू के चेहरे पर तेज दमक रहा था, तिस पर आश्रम के शांत वातावरण को देखते ही प्रताप के दिल में वैराग्य पैदा हुआ।

प्रताप रथ से उतर कर आश्रम में पहुँचा। दूर से ही सहजानंद ने प्रताप

को देखा और अपने शिष्य को साथ ले वे खुद प्रताप के समीप पहुंचे।

प्रताप सहजानंद के सामने घुटने टेककर बोला—"मेरा नाम प्रताप है! मैं हमारी राजधानी प्राकारपुर से आ रहा हूँ। महाराजा ने मुझे राजगिरि का अधिकारी नियुक्त किया है, उस पद को स्वीकार करने के पहले आपके दर्शन हुए, इसे मैं अपना भाग्य मानता हूँ! यहाँ का आश्रम, शांत वातावरण और आपकी सत्संगति पाने के बाद मेरे दिल में वैराग्य पैदा हो रहा है। यदि आप अनुमति दें, तो मैं आप का शिष्य बनकर यहीं पर रहना चाहता हूँ।"

सहजानंद पल भर के लिए प्रताप की ओर परखकर देखकर क्रोध में आ गये और बोले—"मैं सब कुछ त्यागा हुआ सन्यासी नहीं हूँ! दुनिया के व्यवहार के प्रति रुचि रखते हुए न्याय और अन्यायों के बारे में विचार करनेवाला तत्ववेत्ता हूँ। मैं तुम्हारे बारे में सारी बातें जानता हूँ। इस छोटी-सी उम्र में तुम्हें विरागी बनने की ज़रूरत नहीं है, मैं तुमको कभी अपना शिष्य नहीं बना सकता।"

इस पर प्रताप ने सहजानंद को प्रणाम किया और चुपचाप अपने रथ पर सवार हो चला गया।

इसके थोड़ी देर बाद दुर्जय अपने अनुचरों को लेकर पालकी में आ पहुंचा। आश्रम के सामने उतर पड़ा, सहजानंद के चरणों में प्रणाम करके बोला—"महात्मा, गरमी के मौसम में आपको आराम पहुंचाने के लिए आश्रम के बगीचे में संगमरमर के पत्थरों से एक मण्डप बनवाना चाहता हूँ। इस वास्ते मैंने कारीगरों को आपके पास भेज दिया था, लेकिन मैंने सुना कि आपने उन लोगों को वापस भेज दिया है। क्या मैं आपके वास्ते यह छोटी सी सेवा भी करने लायक नहीं रहा?"

सहजानंद मुस्कुरा कर बोले—"तुम अच्छी तरह से जानते हो कि मुझ जैसे

आदमी संगमरमर के पत्थर और मुलायम गद्दों का दुश्मन होता है! अगर तुम मेरी सेवा करना ही अपना ख़ास मक़सद समझते हो तो तुम मेरे साथ आश्रम में क्यों नहीं रह जाते?"

यह सवाल सुनकर दुर्जय सहम गया और बोला-"गुरुदेव, मैं नगर के अंदर कई समस्याओं में उलझा रहता हूँ! फिर भी मैं हमेशा अपने मन में आपका ध्यान करता रहता हूँ! ऐसी हालत में हमेशा के लिए मुझे आश्रम में रहने की क्या ज़रूरत है?"

यह जवाब पाकर सहजानंद गुस्से में आ गये, बोले-"दुर्जय, मैंने कई बार तुमको आश्रम में आकर हमारे साथ रहने के लिए निमंत्रण भेजा। फिर भी न मालूम क्यों तुम यहाँ पर आने में संकोच करते हो? इससे साफ़ मालूम होता है कि मेरे प्रति तुम्हारे मन में आदर का भाव नहीं है! साथ ही मेरे मन में यह संदेह भी पैदा हो रहा है कि तुम किसी खुदगरजी से मेरे प्रति आदर का स्वांग रचते हो! इसलिए तुम कम से कम छे महीने ही सही मेरे साथ आश्रम में क्यों नहीं रह जाते?"

सहजानंद को नाराज़ होते हुए दुर्जय ने कभी नहीं देखा था। आज उनके नाराज़ होते देख दुर्जय कांप उठा और बोला-
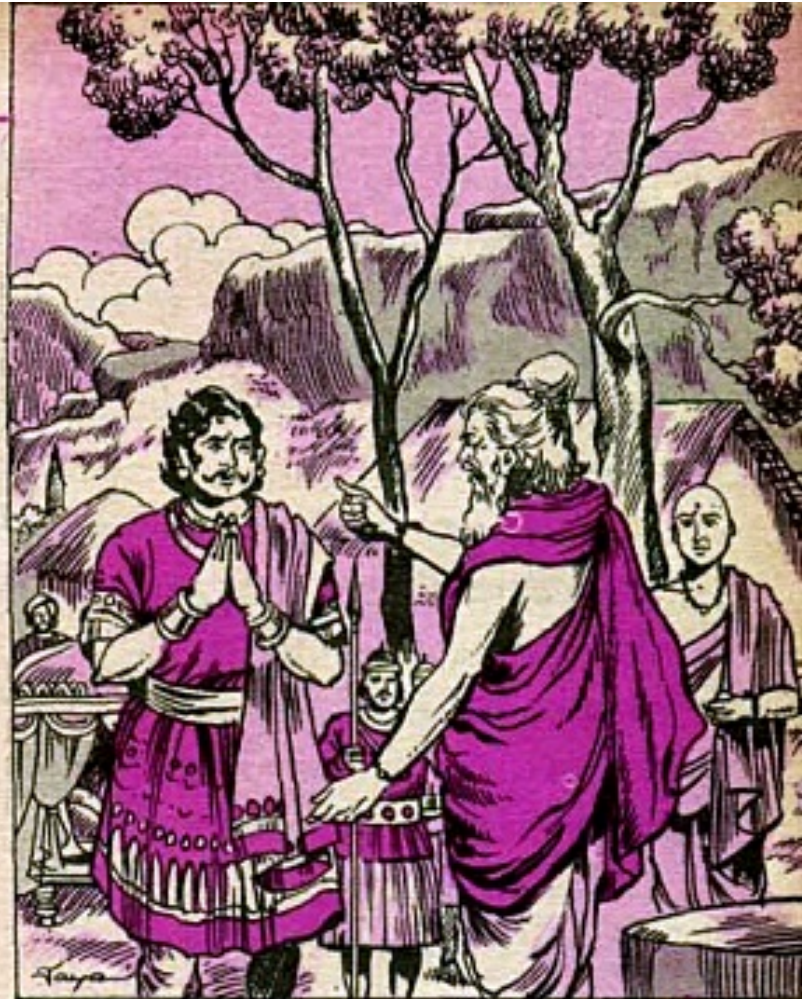
"अगर गुरुजी का आदेश मुझे आश्रम में रखने का ही है, तो मैं इसी क्षण से यहाँ पर रह जाता हूँ!"

इस पर सहजानंद ने संतुष्ट होकर सिर हिलाया, लेकिन उनके मुख्य शिष्य चिन्मय के मन में यह संदेह पैदा हुआ कि गुरुजी पागल तो नहीं हो गये हैं? वरना वे प्रताप को आश्रमवासी बनाने को मना करके दुर्जय को क्यों बनाना चाहते हैं? इस ख्याल से उसने सहजानंद के चेहरे को परखकर देखा।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा-"राजन, चिन्मय के मन में सहजानंद को लेकर जो संदेह हुआ, वही संदेह मेरे भी

मन में पैदा हो रहा है! क्या इस बात को लेकर आप को आश्चर्य नहीं होता कि जब प्रताप अपनी इच्छा से आश्रमवासी बनने को तैयार हो गया, तब उसे आश्रम के लिए नालायक़ बताकर उसे साधू ने वापस भेज दिया। उसी समय राजगिरि के अन्दर दुष्ट माने जाने वाले दुर्जय को अपना शिष्य बनने के लिए निमंत्रण क्यों दिया? सहजानंद के मन में इस विचित्र परिवर्तन का कारण क्या है? इस शंका का उत्तर जानते हुए भी अगर न देंगे, तो आपका सर फटकर टुकड़े-टुकड़े हो जाएगा।"

इस पर विक्रमार्क ने जवाब दिया— "सहजानंद के व्यवहार पर आश्चर्य करने की कोई बात नहीं है! वे एक पंडित और तत्ववेत्ता के रूप में समाज के प्रति अपनी जिम्मेदारी को अच्छी तरह से जानने वाले व्यक्ति हैं। अराजकता की हालत में रहनेवाले राजगिरि के लिए जब राजा ने प्रताप को प्रधान अधिकारी के रूप में नियुक्त किया, तभी सहजानंद ने समझ लिया कि प्रताप एक योग्य अधिकारी है। ऐसे लोगों को आश्रमों में नहीं बल्कि जनता के बीच रहना चाहिए। अब दुर्जय की बात रही, वही राजगिरि में अराजकता फैलाने वाला है! अलावा इसके उसके दिल में इस बात का घमण्ड भी है कि वह महारानी का रिश्तेदार है! ऐसे आदमी को कम से कम छ महीने तक अपने आश्रम में रख सके तो इस बीच प्रताप को दुर्जय के अनुचरों को दबाने का मौक़ा मिल जाएगा! इसके बाद दुर्जय भले ही आश्रम छोड़कर चला जाय, उसका कोई अनुचर न होगा और वह अकेला हो जाएगा! ऐसी हालत में उसे क़ाबू में रखना प्रताप जैसे कुशल अधिकारी के लिए कोई कठिन कार्य न होगा! ये ही सारी बातें सोचकर सहजानंद ने प्रताप और दुर्जय के प्रति भिन्न रूपों में व्यवहार किया है।"

राजा के इस प्रकार मौन-भंग होते ही बेताल शव के साथ गायब होकर फिर से पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)

पंडित और मूर्ख

शशांक नगर के नजदीक़ एक पहाड़ी गुफ़ा में वीरेश नामक एक डांकू रहता था। वह अपने अनुचरों के साथ रास्ते से आने-जाने वालों पर हमला बोल देता और उन्हें लूट लेता था। कभी-कभी वह नगर में भी चोरियाँ किया करता था।

एक दिन वीरेश ने नगर में चोरी करने के लिए अपने तीन अनुचरों को भेजा। एक हफ़्ते बाद उनमें से एक लौट आया और उदासी के साथ सर झुका कर खड़ा हो गया।

वीरेश नें उससे पूछा–"कहो, क्या बात है? बाक़ी दोनों क्या सिपाहियों के हाथ पड़ गये?"

"सरदारजी, वे सिपाहियों के हाथ नहीं पड़े, बल्कि धर्मचूड नामक एक साधू के हाथ फँस गये!" चोर ने झट से जवाब दिया।

वीरेश ने गुस्से में आकर पूछा–"बात साफ़-साफ़ क्यों नहीं बताते? यह घुमा-फिरा कर क्या बकते हो?"

चोर ने कहा–"हम तीनों आदमी दिन भर सारे शहर में टोह लेते और रात को लौट कर एक सराय में सो जाते थे। चौथे दिन सराय के सामने एक मंदिर के मण्डप में धर्मचूड नामक एक साधू आये। वे पुराण पाठ करते थे और धर्म की बातें लोगों को सुनाया करते थे। हम लोग भी अपना वक़्त बिताने के लिए वहाँ पर पहुँचे। लगातार दो-तीन दिन उनके उपदेश सुनने के बाद मेरे दोस्तों का दिल एकदम बदल गया। वे यह सोचकर साधू के शिष्य बन गये कि डाके डालकर हम नाहक़ पाप क्यों मोल ले!"

यह जवाब सुनकर वीरेश ने गुस्से में आकर पूछा–"तुम क्या करना चाहते हो?"

काशीराम

"मैं भी इस पाप कर्म से मुक्त होना चाहता हूँ! फिर भी असली बात आप को सुनाने आया हूं।" चोर ने निडरता के साथ जवाब दिया।

"ओह, ऐसी बात है!" वीरेश सर हिलाकर बोला—"तुम आज रात के लिए यहीं पर रह जाओ! मैं नगर में जाकर धर्मचूड को खतम करके लौटता हूं।"

उस दिन रात को वीरेश जब मण्डप के पास पहुँचा, तब धर्मचूड पुराण पाठ कर रहे थे। लोग एकदम अपने को भूलकर उनके उपदेश सुन रहे थे।

वीरेश एक बूढ़े के पास पहुँचा और उससे पूछा—"साधू की बातें सुनकर लोग यों तन्मय होते जा रहे हैं! इसकी वजह क्या है?"

"वे तो एक महान ज्ञानी हैं!" बूढ़े ने कहा।

"अजी, एक ही वाक्य में महान ज्ञानी कहने से हो गया? आखिर इसके पीछे क्या रहस्य है?" वीरेश ने फिर पूछा। वीरेश की मूर्खता पर खीझकर बूढ़ा बोला—"उनके हाथ में ताड़ पत्रों वाला जो ग्रंथ है, वही इसका रहस्य है।"

वीरेश ने सोचा कि ताड़ पत्रों वाले उस ग्रंथ की चोरी करने पर धर्मचूड भी मूर्ख बन जाएगा, तब उसके अनुचरों के साथ बाक़ी लोग भी साधू के प्रवचन सुनने नहीं जायेंगे।

इस विचार से वीरेश ने एक दिन रात को धर्मचूड़ के निवास से ताड़ पत्रों की चोरी की और अपनी गूफा को लौट गया। इसके एक हफ़्ते बाद वीरेश मंदिर के मण्डप के पास पहुँचा।

उसने देखा की धर्मचूड़ के हाथ में कोई ग्रंथ नहीं है, फिर भी वे लोगों को उपदेश दे रहे हैं और लोग तन्मय होकर उनके उपदेश सुन रहे हैं। इस पर वीरेश के दिल में अपनी मूर्खता पर और अपने पापों के प्रति घृणा पैदा हुई। वह लोगों के बीच से रास्ता बनाते आगे बढ़ा और उसने धर्मचूड के सामने जाकर साष्टांग प्रणाम किया।

कीलकीक़ीमत

पुराने जमाने में एक गाँव में एक गरीब युवक रहा करता था। उसका नाम गोविंद था। उसकी शादी हो गई थी और उसके दो बच्चे भी हुए। मगर गोविंद के यहाँ जमीन के नाम पर एक बीघा तक न था, अतः उसे अपने परिवार का पालन-पोषण अपनी शारीरिक मेहनत के बल पर करना पड़ा। इसलिए वह रोज पैदल चलकर शहर में जाता, थोड़ा-बहुत कमा लेता, घर के लिए आवश्यक चीजें खरीद कर अपने गाँव को लौट आता था।

दर असल गोविंद किफ़ायती था। उसका बाप उसे बचपन में समझाया करता था—"बेटा, हर चीज़ कभी न कभी ज़रूर काम देगी, इस बात को मत भूलना।"

एक दिन वह प्रधान रास्ते पर शहर की ओर जा रहा था, तभी उधर से मंत्री का पुत्र घोड़े पर तेजी के साथ आ निकला। गोविंद के देखते-देखते घोड़े के एक पैर के नाल की एक कील फिसल कर नीचे गिर गई।

गोविंद ने ऊँची आवाज में पुकारा—"जनाब, नाल की कील छूट गई है!"

मंत्री के पुत्र ने पीछे की ओर मुड़कर देखा और लापरवाही के साथ हाथ हिला कर आगे बढ़ा। एक नाल की कील के वास्ते पीछे लौटकर जाना उसे अपमान-जनक सा लगा। अलावा इसके वह जंगल के नजदीक़ के रास्ते से नगर में जा रहा था। इसलिए उसने सोचा कि कील के न होने पर भी ज्यादा दिक़्क़त न होगी!

मगर इस मामले में मंत्री के पुत्र ने गलत सोचा था। वह जंगल में थोड़ी ही दूर आगे बढ़ा था कि घोड़े के पैर का नाल निकल गया। अगर गोविंद के यहाँ से मंत्री के पुत्र ने कील ले ली होती

२५ वर्ष पहले की चन्दामामा की कहानी
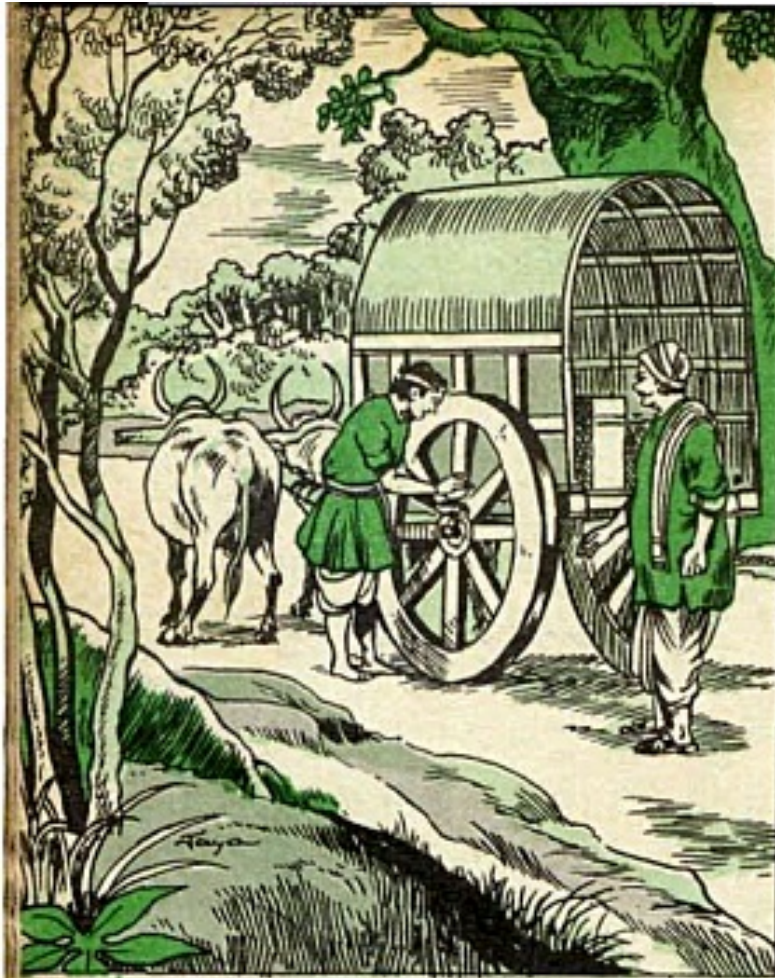
तो वह किसी तरह से नाल को फिर से जड़ देता। नाल के न होने से घोड़ा लंगड़ाते चलने लगा जिससे मंत्री के पुत्र को घोड़े से उतर कर पैदल चलना पड़ा। वह जंगल में से होकर जा रहा था, इस पर चोरों ने उस पर हमला करके लूट लिया और उसे एक पेड़ से बांध कर भाग गये।

इस बीच गोविंद ने नाल की कील उठा कर अपने पास रख ली और आग बढ़ा। वह थोड़ी ही दूर गया था कि रास्ते में एक जगह उसने एक बैल गाड़ी को लुढ़क कर गिरे हुए देखा। गाड़ी के बाजू में एक अमीर खड़ा हुआ था।

अमीर ने गोविंद को देखते ही पूछा– "सुनो भाई, तुम्हारे पास कोई कील है क्या? मुझे जल्दी शहर में जाना है। रास्ते में कहीं धुरी की खील छूट कर गिर गई है। इस जंगल में कहीं लोहे का टुकड़ा भी दिखाई नहीं देता।"

गोविंद ने अपने हाथ की कील निकाल कर पहिये की धुरी में एक पत्थर से ठोंक दिया। अमीर को लगा कि उसकी जान में जान आ गई है।

"शायद तुम भी शहर में जाते हो। मेरे साथ चलो।" यों कहकर अमीर अपने साथ गोविंद को गाड़ी में शहर में ले गया और उसके हाथ में सोने का एक सिक्का धर दिया।

सोने के सिक्के को देखते ही गोविंद की आँखें चमक उठीं। उस सिक्के से वह अपने परिवार का दो महीने का खर्चा चला सकता है। उसके पिता ने बहुत समय पहले जो बात कही थी, वह सच साबित हुई। एक छोटे नाल की कील ने उसे एक सोने का सिक्का कमा कर दिया।

इसके बाद बाजार में जाकर गोविंद ने अपने परिवार के लिए महीने भर की खाद्य सामग्री खरीदी और जंगल के रास्ते घर की ओर चल पड़ा। थोड़ी दूर आगे बढ़ने पर रास्ते के किनारे पेड़ों के पीछे से

आर्तनाद सुनाई दिये। गोविंद अपने बोरे को एक जगह झाड़ियों के बीच छिपा कर पेड़ों के बीच पहुँचा। काफ़ी दूर आगे जाने पर उसे छे बच्चे और एक औरत दिखाई दी। वे सब बड़ी दीन-हीन हालत में थे। वह औरत एक करोड़पति की पत्नी थी और वे बच्चे उसी के थे।

गोविंद को देखते ही वह औरत हिम्मत बटोर कर बोली—"सुनो भाई, परसों शाम को हम लोग जंगल में सैर करने निकले। मेरे बच्चे फूल चुनने जंगल में घुस पड़े। मैं यह सोचकर उनके पीछे चल पड़ी कि कहीं मेरे बच्चे भटक न जाये। इस बीच सूर्यास्त हो गया। हम रास्ता भटक गये थे। उस रात को अन्न-जल के बिना शहर में लौटने के लिए रास्ता ढूंढ़ते रहें। कल दिन-भर सारा जंगल घूमते रहें, पर हमें रास्ता नहीं मिला। खाना न खाने के कारण हम टहलने की ताक़त भी खो बैठे थे। इसलिए हम लोग डर के मारे चिल्लाने लगे, रोने लगे। मगर हमारी पुकार सुनकर हमें बचाने के लिए कोई नहीं आया, आज तुम देवता के रूप में हमें दिखाई दिये।"

"आप लोगों को डरने की कोई ज़रूरत नहीं है। मैं आपको रास्ता दिखाऊँगा, मेरे साथ चलिये।" गोविंद ने समझाया।

"भाई, हम इस वक़्त बिलकुल चलने की हालत में नहीं हैं। हमें इसी वक़्त थोड़ा-बहुत खाना चाहिए।" बच्चों की माँ ने कहा।

"तब तो आप लोग यहीं रहिये। मैं अभी आ जाता हूँ।" यों कहकर गोविंद वहाँ से दौड़ते हुए चला गया और थोड़ी ही देर में अपना बोरा उठा लाया। गोविंद अपने बच्चों के लिए जो खाने की चीज़ें और मिठाइयाँ लाया था, वे सारी चीज़ें उस बोरे में थीं। गोविंद ने वे सारी चीज़ें उन बच्चों को दे दीं और अपने साथ लाई गई खाद्य सामग्री से वहीं पर खाना बनाया। तब सब को

खाना खिलाया। इस पर उन लोगों में चलने-फिरने की ताक़त आ गई। इसके बाद गोविंद उनको अपने साथ लेकर रास्ते तक पहुँचा और बोला—"अब मुझे इजाज़त दीजिए, मैं अपने रास्ते चला जाऊंगा।"

"बाप रे बाप! हम घर कैसे पहुँच सकते हैं? हम को घर छोड़कर तब चले जाओ।" अमीर की पत्नी ने कहा। इस पर गोविंद ने मान लिया। घर पहुँचने पर अमीर की पत्नी ने गोविंद के हाथ में एक छोटी-सी थैली थमा दी।

गोविंद ने थैली खोल कर देखा, उसमें आठ सोने के सिक्के थे। उन सिक्कों को देखने पर गोविंद की आँखें चमक उठीं। उसने सपने में भी न सोचा था कि एक नाल की कील उसे इतनी सारी रक़म कमा कर देगी। इसके बाद वह ज्यादा सामान खरीद कर जंगल के रास्ते गाँव की ओर चल पड़ा।

जंगल के बीच पहुँचते ही उसे किसी व्यक्ति के कराहने की आवाज़ सुनाई दी, इस पर गोविंद उस दिशा में आगे बढ़ा। पेड़ से बँधे बेहोश मंत्री पुत्र उसे दिखाई दिया।

मंत्री के पुत्र ने हीन स्वर में अपनी हालत सुनाई। इस पर गोविंद ने मंत्री पुत्र के बंधन खोल दिये, उसे हाथ का सहारा देकर पैदल चलवा कर अपने घर ले गया और भर पेट खाना खिलाया।

इसके बाद गोविंद ने अपनी सारी कहानी सुनाई—"महाशय, नाल की कील खोकर आपने जो नुक़सान उठाया, मैं उसी की वजह से दुगुना लाभ पाया।"

सारी बातें सुनकर मंत्री का पुत्र बोला—"गोविंद, तुम जैसा एक आदमी हमेशा मेरी रखवाली के लिए चाहिए। तुम मेरे साथ नगर में चले चलो। तुम्हें अच्छे मकान के साथ अच्छी खासी तनख्वाह भी दूँगा।"

उसी दिन गोविंद अपने परिवार को लेकर नगर में चला गया और मंत्री के पुत्र के यहाँ नौकरी में प्रवेश किया।

प्राचीन काल में काशी राज्य पर राजा ब्रह्मदत्त शासन करते थे। उनके दो पुत्र थे। राजा का अंतिम समय जब निकट आया, तब उन्होंने बड़े राजकुमार को राज्य सौंपकर छोटे राजकुमार को सेनापति के पद पर नियुक्त किया। ब्रह्मदत्त की मृत्यु के बाद बड़े राजकुमार के राज्याभिषेक की तैयारियाँ होने लगीं, उस वक्त बड़े राजकुमार वैराग्य में आकर बोले-"मैं यह राज्य नहीं चाहता। छोटे राजकुमार को आप लोग गद्दी पर बिठाइये।"

इसके बाद बड़े राजकुमार काशी राज्य को छोड़कर दूर के एक सामंत राज्य में पहुँचे। वहाँ पर एक धनवान के घर में मेहनत करते हुए अपने दिन बिताने लगे।

थोड़े दिन बाद काशी राज्य के कुछ अधिकारी जमीन की पैमाइश करके कर लगाने के काम पर उस राज्य में आ पहुँचे। लोगों ने धनवान के घर में रहनेवाले राजकुमार को पहचाना और उनके प्रति श्रद्धा और भक्ति प्रकट की। यह समाचार मिलते ही धनवान बड़े राजकुमार के पास पहुँच कर बोला-"महानुभाव, आप अपने छोटे भाई को चिट्ठी लिखकर मेरे कर घटाने की कृपा करें।" राजकुमार ने छोटे राजकुमार के पास चिट्ठी भेजी। उन्होंने बड़े राजकुमार की बात मान लीं।

यह खबर मिलते ही गाँव के कई लोग राजकुमार के पास पहुँचे और उनसे निवेदन करने लगे कि उनके कर भी घटाने का इंतज़ाम करें। बड़े राजकुमार ने काशी राजा के पास प्रार्थना-पत्र भिजवा दिया। इस पर सब लोगों के कर घटाये गये।

उस दिन से गाँव के लोग अपनी जमीन के करों की रक़म लाकर बड़े

राजकुमार के हाथ सौंपने लगे। इस कारण बड़े राजकुमार के मन में वैराग्य जाता रहा और राज्य पाने की इच्छा बढ़ती गई।

इसके बाद वे धीरे-धीरे एक-एक सामंत राज्य पर अधिकार जमाते हुए इसकी सूचना अपने छोटे भाई को देने लगे। फिर भी छोटे भाई बड़े भाई की हर बात को मानते गये। धीरे-धीरे बड़े राजकुमार के मन में काशी राज्य पर ही क़ब्जा करने का लोभ पैदा हुआ। एक दिन उन्होंने अपने छोटे भाई के पास यह संदेशा भेजा–"तुम सारा काशी राज्य मुझे सौंपने के के लिए तैयार हो या मेरे साथ युद्ध करने के लिए? जल्दी सूचित करो।"

छोटे भाई ने उत्तर भेजा–"यह राज्य तो आप ही का है। आप इसे जब चाहे तब ले सकते हैं।" इसके बाद बड़े भाई काशी राज्य की गद्दी पर बैठे और छोटे राजकुमार उनके सेनापति बने।

बड़े राजकुमार काशी राज्य से संतुष्ट नहीं हुए। वे एक-एक करके कई राज्यों पर अधिकार करते गये; फिर भी वे संतुष्ट नहीं हुए।

एक बार स्वर्ग लोक के राजा इंद्र भूलोक के मामलों पर चर्चा कर रहे थे, उस वक़्त काशी राज्य की चर्चा चल पड़ी। उन्हें लगा कि काशी राज्य के मामले में उपेक्षा करें तो कई राज्यों की हानि हो सकती है। इसलिए इन्द्र ने बड़े राजकुमार को उचित सबक़ सिखाने का निश्चय कर लिया। इसी संकल्प को लेकर देवराज इन्द्र एक युवक के रूप में काशी राजा के दर्शन करने आ पहुँचे। वे बोले–"महाराज, मैं आपको एक छोटा-सा रहस्य बताने आया हूँ।"

राजा युवक को अपने अंत:पुर में ले गये। युवक ने राजा से कहा–"राजन, मेरी जानकारी में तीन महा नगर हैं। वे नगर न केवल बड़े ही संपन्न हैं, बल्कि उनके पास भारी चतुरंगी सेना भी है। मैं अपनी शक्ति के बल पर उन तीनों नगरों को

इसके जवाब में आवेश में आकर राजा ने उस युवक के द्वारा तीन महा नगर जीतकर देने का सारा वृत्तांत सुनाया और बोले–"उसी समय से यह मानसिक व्याधि मुझे सता रही है। यदि आप इसे दूर कर सकते हैं तो कोशिश कीजिए।"

बोधिसत्व ने राजा से पूछा–"राजन, अगर आप इस तरह मानसिक व्याधि के शिकार हो जायेंगे तो क्या आप उन तीनों महा नगरों को जीत सकते हैं?"

"नहीं, कभी नहीं।" राजा ने झट जवाब दिया।

"इसलिए आपके द्वारा चिंता करते रहने से कोई फ़ायदा नहीं है। इस दुनिया की हर चीज़ थोड़े दिन बाद हमारी आँखों के सामने ही अदृश्य होती जा रही है न?" बोधिसत्व ने पूछा।

"हाँ, सच है।" राजा ने कहा।

"यह भी सत्य है न कि प्रत्येक जीव को अपने प्राणों के निकलते ही इस दुनिया को छोड़ कर जाना पड़ता है, इसलिए हे राजन्! तीन क्या, तीस महा नगरों को जीतने पर भी आप ज्यादा सुखी नहीं हो सकते। इस संसार में कोई भी चीज़ शाश्वत नहीं है। आशा नामक भाव एक बहुत बड़ा भूत है। आशा का कोई अंत नहीं है। जब कोई भी मानव आशा के वशीभूत हो जाता है तब उसे मानसिक व्याधि सताने लगती है, इससे पिंड छुड़ाना चाहे तो मन को कामनाओं पर क़ाबू रखना होगा। जैसे चर्मकार जूते के बराबर चमड़े को काटता है, वैसे ही कामनाओं को भी हमें वहीं तक बढ़ने देना है, जहाँ तक वे हमारे लिए उपयोगी हो सकती है।" बोधिसत्व ने समझाया।

बोधिसत्व का यह उपदेश सुनने पर राजा के मन को शांति मिली और उनकी मानसिक व्याधि गायब हो गई। इसके बाद राजा के अनुरोध पर बोधिसत्व ने उन्हें धर्मोपदेश दिया, अपने जीवन-पर्यंत राजा का मार्ग दर्शन करते रहें।

संत कबीर

वाराणसी के समीप के एक गाँव में नीरू और नीमा नामक एक मुसलमान दंपति रहा करते थे। एक दिन सवेरे तालाब के पास एक पेड़ के नीचे नीरू को एक शिशु रोते हुए दिखाई दिया। उसने उस शिशु को उठा ले जाकर अपनी पत्नी के हाथ सौंप दिया।

उस दंपति ने उस शिशु का कबीरदास नामकरण किया और बड़े ही लाड़-प्यार से उसे पालने लगे। कबीरदास बड़े होने पर अपने पालित पिता का पेशा अपना कर करघे पर कपड़े बुनने लगे। करघा चलाते वे अपने मन में गीत गुनगुनाते थे।

उन्हीं दिनों में वाराणासी में एक प्रसिद्ध आचार्य रामानंदजी रहा करते थे। कबीरदास उस आचार्य के व्यक्तित्व से बहुत ही प्रभावित हुए। वे रामानंदजी का शिष्य बनना चाहते थे, लेकिन उनके मन में यह चिंता सताने लगी कि शायद रामानंदजी उनको अपने शिष्य के रूप में स्वीकार नहीं करेंगे।

रामानंदजी रोज सवेरे उठकर गंगा नदी में स्नान करने के लिए जाया करते थे। एक दिन सवेरे ही उठ कर कबीर रामानंदजी के जाने वाले स्नान घाट की एक सीढ़ी पर जा लेटे। स्नान समाप्त कर लौटते वक्त उस अंधेरे में रामानंदजी का पैर कबीरदास की पीठ पर पड़ गया। इस पर आचार्य जी के मुंह से "राम! राम!" निकल गया।

दूसरे ही क्षण कबीरदास उठ खड़े हुए और हाथ जोड़कर बोले—"महानुभाव, इस प्रभात के वक्त पवित्र गंगाजी में स्नान करके लौटते हुए आपने 'राम' के दिव्य नाम का उपदेश दिया है!" इस पर रामानंदजी ने कबीरदास से पूछा—"तुम कौन हो?" कबीरदास ने विनय पूर्वक जवाब दिया—"मेरा नाम कबीरदास है! आप का शिष्य हूँ! बस, मेरा परिचय यही है?"

इसके बाद कबीरदास ने भक्ति संबंधी कई पद रचे जो जनता में बहुत ही लोकप्रिय हुए। साथ ही उन्होंने यह प्रचार करना शुरू किया कि खुदा को पाने के लिए बाह्याडंबरों को छोड़ भक्ति मार्ग को अपनाना चाहिए। उन्होंने जाति-वर्ण आदि भेदभावों का खण्डन किया, साथ ही हिन्दू और मुसलमानों के बीच जो अंधविश्वास थे, उनकी निर्दयता पूर्वक आलोचना की।

कबीर से ईर्ष्या करने वाले कुछ लोगों ने कई लोगों के पास यह खबर भेजी कि कबीरदास ने उन्हें दावत के लिए निमंत्रण दिया है। इस पर कई लोग उसके घर पहुँचे। उस वक्त कबीरदास घर पर नहीं थे। जब वे घर लौटे तब उन्हें मालूम हुआ कि ठीक उन्हीं के जैसे एक आदमी ने सब को दावत खिला कर भेज दिया है। यह ख़बर मिलते ही कबीरदास अचरज में आ गये।

कुछ सनातन संप्रदाय के लोगों ने दिल्ली के सुलतान के पास यह शिकायत भेज दी कि कबीरदास उनके धार्मिक विश्वासों की अवहेलना कर रहे हैं! सुलतान ने कबीरदास से इस बात की कैफ़ियत तलब की, इस पर उन्होंने यह जवाब दिया था– "न मैं हिन्दू हूँ और न मुसलमान ही। मैं तो हिन्दू और मुसलमान का भेद भाव न रखनेवाले खुदा का भक्त हूँ।"

कबीरदास का यह जवाब सुनकर एक अधिकारी ने उन्हें डराया कि तुम अपने विचार बदल डालो। लेकिन कबीरदास ने जवाब दिया था– "हाथी पर सवार हो चलने वाला कबीर क्या कुत्ते की भूँक सुनकर डर सकता है?" इस पर सभी दरबारी भय-विस्मय में आ गये, मगर सुलतान ने उनकी निडरता की तारीफ़ करके आदर पूर्वक उन्हें भेज दिया।

बुढ़ापे में कबीरदास का देहांत गोरखपुर में हुआ। उनके भौतिक शरीर को हिन्दू लोग जलाना चाहते थे और मुसलमान लोग अपने संप्रदाय के अनुसार दफ़नाना चाहते थे। इस बात को लेकर उन दोनों महजब वालों के बीच बड़ा झगड़ा शुरू हुआ।

लेकिन अचरज की बात यह थी कि ज्यों ही उनके शरीर पर ढका हुआ सफ़ेद वस्त्र हटाया गया, त्यों ही उनके शरीर की जगह कमल के फूल दिखाई दिये। उनमें से थोड़े फूल ले जाकर हिन्दुओं ने काशी में उन पर एक स्मारक बनाया तो बाकी फूलों को ले जाकर मुसलमानों ने दफ़नाकर उस पर एक मक़बरा बनाया।

कबीरदास चौदहवीं शताब्दी के अंत से लेकर पंद्रहवीं शताब्दी के आरंभ तक जीवित रहें। उनके गीत और भक्ति पद्धति ने भावी पीढ़ियों को खूब प्रभावित किया। खासकर उनका प्रभाव गुरु नानक, मीराबाई, रईदास आदि पर विशेष रूप से पड़ा। उनके उपदेशों से वे भोग काफी प्रभावित हुए थे।

मंगलापुर के जमीन्दार के छोटे भाई विश्वनाथसिंह के एक शौक था। वह हमेशा दूसरों में कोई न कोई गलती दिखा कर खुश हो जाया करता था। अपना शौक पूरा करने में वह छोटे बड़े का ख्याल नहीं करता था।

मंगलापुर में हर साल चैत्र पूर्णिमा के दिन परमानंद स्वामी नामक एक साधू जरूर आया करते थे। उनके आने की खबर के मिलते ही मंगलापुर की जनता ने एक रथ को खूब सजाया और उसमें बैल जोत कर उनका स्वागत करने चल पड़ी।

साधू परमानंद मुस्कुराते हुए उस पर जा बैठे। इस पर भीड़ में से विश्वनाथ सिंह आगे बढ़ा और मजाक़ उड़ाते हुए पूछा—"ओह, सारे सुख-भोगों को त्यागने वाले स्वामोजी के जुलूस के लिए क्या रथ की जरूरत आ पड़ी?"

यह मज़ाक़ सुनकर सब लोग नाराज़ हो गये, पर परमानंद स्वामी शांत स्वर में बोले—"तुम्हारी बातों में थोड़ी-बहुत सचाई जरूर है, लेकिन तुम्हारी बातों का जवाब वक़्त आने पर दूंगा। तुम अभी रथ पर मेरी बगल में बैठ जाओ।"

विश्वनाथ सिंह यह सोचकर फूला न समाया, मानो उसने बहुत बड़ा काम साध लिया और वह चुपचाप रथ पर जा बैठा। थोड़ी ही देर बाद रथ एक महल के सामने जा रुका।

विश्वनाथ सिंह रथ पर से उतरते हुए बोला—"वाह, यह भी खूब है! दुनिया को माया बताने वाले स्वामीजी के ठहरने के लिए क्या ऐसे विशाल महल की जरूरत आ पड़ी?"

इस पर परमानंद स्वामी हँसकर बोले—"अगर तुम एक हफ़्ते तक मेरे साथ

दुर्गादत्त शर्मा

इसके बाद स्वामीजी बोले–"मैं यहाँ पर जितने दिन रहूँगा, उतने दिन मेरे साथ जैसा व्यवहार करेंगे, वैसा व्यवहार विश्वनाथसिंह के साथ भी कीजियेगा।"

उस दिन से विश्वनाथसिंह भी स्वामीजी के साथ सब प्रकार के आदर-सत्कार पाने लगा। तीसरे दिन रात को परमानंद विश्वनाथसिंह से बोले–"मैं किसी भी गाँव में तीन दिन से ज़्यादा नहीं ठहरता। कल मैं दूसरे गाँव में जाता हूँ। तुम भी मेरे साथ चलोगे?"

विश्वनाथसिंह ने स्वामीजी के साथ चलने को मान लिया। दूसरे दिन सवेरे मंगलापुर के लोग स्वामीजी को रथ पर बिठा कर जुलूस निकालते गाँव की सीमा तक ले गये और श्रद्धापूर्वक विदा करके लौटे।

रथ के जाते ही परमानंद विश्वनाथसिंह से बोले–"सुनो, अब हम उस सामनेवाली पगडंडी से होकर पैदल चलेंगे तो सूर्यास्त तक हम दूसरे गाँव में पहुँच सकते हैं।"

इसके बाद वे दोनों पगडंडी से होकर पैदल चलने लगे। वह रास्ता कांटे व कंकड़ों से भरा हुआ था। इसलिए चलने में बड़ी तक़लीफ़ मालूम होने लगी। विश्वनाथसिंह खूब थक गया, तिस पर उसे भूख और धूप सताने लगीं। मगर परमानंद बड़ी तेज़ी के साथ चले जा रहे थे।

रह जाओगे, तो तुम्हारी सभी शंकाओं का समाधान हो जाएगा।"

विश्वनाथसिंह ने स्वामीजी की बात मान ली। परमानंद स्वामी ने ज्योंही महल में प्रवेश किया, त्योंही एक बजाज चाँदी के थाल में फल और फूलों के साथ एक रेशमी वस्त्र लाकर उनके चरणों के आगे रखते हुए बोला–"स्वामीजी, कृपया आप इन्हें स्वीकार कर लीजियेगा।"

परमानंद बोले–"यह तो बड़ी खुशी की बात है। तुम्हारी इच्छा के मुताबिक़ इन्हें ग्रहण करता हूँ; पर तुम इसी प्रकार का एक रेशमी वस्त्र लाकर विश्वनाथसिंह को भी दे दो।"

विश्वनाथ सिंह से चला नहीं गया, उसने स्वामीजी से कहा—"महानुभाव, प्यास के मारे मेरी जीभ सूखती जा रही है। मुझे पानी चाहिए।"

परमानंद ने रास्ते के किनारे का एक तालाब दिखाते हुए कहा—"जाओ, अपनी प्यास बुझा लो।"

"वह पानी तो गंदा मालूम होता है। कल तक तो प्यास का नाम लेते ही आपने फलों का रस दिलवाया। क्या यह बात आप भूल गये?" हाँफते हुए विश्वनाथसिंह ने कहा।

"ऐसी बात नहीं, लेकिन यहाँ पर हमें फलों का रस देनेवाला कोई नहीं है न?" यों कहते परमानंदस्वामी तालाब में उतर पड़े और अंजुली भरकर भर पेट पानी पी लिया। विश्वनाथसिंह भी अपनी प्यास बुझाकर तालाब के किनारे आ बैठा और बोला—"महानुभाव, अब मेरे अन्दर चलने की ताक़त नहीं है।"

परमानंदस्वामी मंदहास करते हुए उसकी बगल में बैठ गये। क़रीब-क़रीब एक घंटे के बाद उधर से एक बैल गाड़ी आ निकली। गाड़ीवाला शरभदास परमानंद स्वामी को देखते ही गाड़ी से उतर पड़ा और प्रणाम करके बोला—"स्वामीजी, गाड़ी पर सवार हो जाइये, हमारे गांव चलेंगे।"
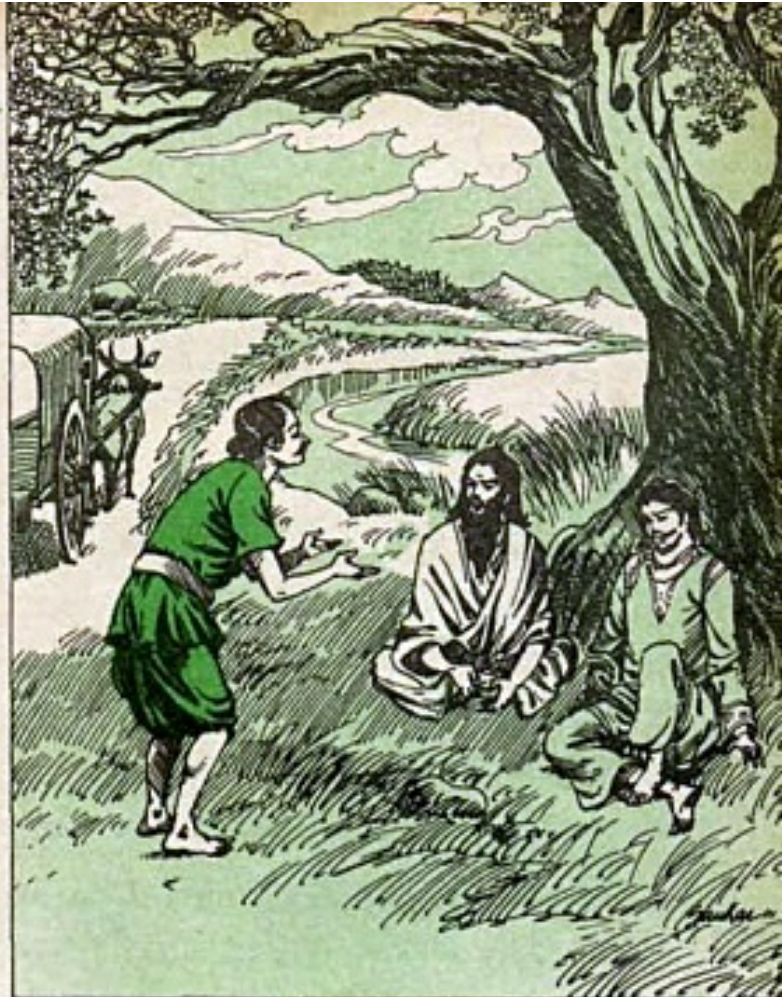
शरभदास के आग्रह पर स्वामीजी और विश्वनाथ सिंह गाड़ी पर सवार हुए और आधी रात के क़रीब एक गाँव में पहुंचे। शरभ ने चौपाल के पास गाड़ी को रोक कर कहा—"स्वामीजी, मेरा घर बहुत ही छोटा है, यह चौपाल आपके ठिकने के लिए ज्यादा अनुकूल होगा!"

इस पर परमानंद और विश्वनाथ सिंह चौपाल में पहुँचे।

परमानंद बोले—"आज रात को हमें यहीं पर आराम करना होगा।"

विश्वनाथ सिंह उदास होकर बोला—"नींद की बात ख़ुदा जाने, पहले तो भूख मिटानी है!"

इतने में शरभ दो मटकों में मांड ले आया और विनीत स्वर में बोला–"इस रात के वक़्त और कोई चीज हमारे घर में नहीं है, कृपया मुझे माफ़ कीजिए!"

इस पर परमानंद ने प्यार से मांड पीकर मटका गोविंद के हाथ दे दिया। विश्वनाथसिंह भी मांड पीकर कै करने वाले का अभिनय करते बोला–"इसमें नमक तक नहीं है!"

इसके बाद जब गोविंद अपने घर जाने को हुआ, तब उसे अपने पास बुलाकर परमानंद बोले–"इस आधी रात के वक़्त तुमने मांड पिला कर हमारी जान बचाई। तुम्हारे इस उपकार को हम कभी भूल नहीं सकते। यह रेशमी शाल ले लो। इसके अलावा मेरे पास तुम्हें देने के लिए कुछ नहीं है।" यों कह कर स्वामीजी ने गोविंद के हाथ शाल रख दी।

विश्वनाथ सिंह ने अजरज में आकर पूछा–"बिना नमक वाले मांड के लिए आप रेशमी वस्त्र पुरस्कार में देते हैं? रेशमी वस्त्र की क़ीमत तक न जानने वाले आपने उसे लिया ही क्यों?"

साधू परमानंद मुस्कुराते बोले–"मंगलापुर की जनता ने प्रेम से भेंट किया तो मैंने ले लिया। मैं तो गेरुआ वस्त्र पहनने वाला ठहरा, मेरे लिए इस रेशमी वस्त्र की ज़रूरत ही क्या है? विश्वनाथ, मनुष्य को सब चीज़ों को समान दृष्टि से देखने की आदत डालनी चाहिए, प्रेम पूर्वक हमें अगर कोई दावत देते हो या मांड पिलाते हो, वे दोनों मेरी दृष्टि में बराबर हैं। मैं सुख की घड़ियों में गर्व का अनुभव नहीं करता और न दुख के समय हताश ही हो जाता हूँ। पर सभी स्थितियों में मैं मानव मात्र की मदद करने की कोशिश किया करता हूँ।"

इस पर विश्वनाथ सिंह परमानंद स्वामी के चरण छूकर बोला–"आपकी इस महानता को समझे बिना मैंने आपके साथ अभद्र व्यवहार किया है। आप मुझे कृपया माफ़ कीजिए!"

सब कोई वीर हैं!

कुंतल देश का निवासी अजय के कर्पूर देश की राजधानी इंद्रपुर में विनय नामक एक दोस्त था। एक दिन विजय अपने घोड़े पर सवार होकर अपने दोस्त को देखने इंद्रपुर पहुंचा।

विनय ने अजय का अच्छे ढंग से आदर-सत्कार किया। शाम को वे दोनों अपने अपने घोड़ों पर सवार हो राजधानी नगर को. देखने चल पड़े। थोड़ी दूर जाने पर विनय का घोड़ा पीछे रह गया। आगे जानेवाला अजय सर घुमा कर गर्व से बोला—"देख रहे हो न, हमारे देश के घोड़े अच्छे नस्ल के होते हैं! मेरा घोड़ा कैसे तेज गति के साथ दौड़ता है?"

विनय मुस्कुरा कर बोला—"हमें अच्छे नस्ल के घोड़ों की जरूरत नहीं है, लड़ाई के मैदान में दुश्मन से लड़ते वक्त घोड़ों की तेजी से कोई मतलब नहीं होता! पीठ दिखाकर भागने वाले दुश्मन का हम लोग कभी पीछा नहीं करते, क्योंकि हमारे देश के सब कोई वीर होते हैं!" अपने दोस्त का जवाब सुनकर अजय बड़ा खुश हुआ।

आख़िरी फ़ैसला

गोविंदपुर में नीलकंठ नामक एक किसान रहा करता था। उसके यहाँ सिर्फ़ दो बीघे की जमीन थी। उसकी इकलौती बेटी का नाम अवंती था। अवंती की माँ जब मर गई, तब नीलकंठ ने उसे बड़े ही लाड़-प्यार से पाला और पोसा। अवंती जब बड़ी हो गई, तब उसकी शादी की समस्या नीलकंठ को सताने लगी। दस-पन्द्रह हज़ार रुपये दहेज देने पर ही वर मिल सकता था। इसलिए उधार लाने के ख्याल से नीलकंठ अपने रिश्तेदारों के घर चल पड़ा। अवंती भी पड़ोसी गाँव में अपनी सहेली को देखने चली गई।

शाम को अवंती अपने घर लौट आई तो देखती क्या है! उसका पिता किसी के साथ झगड़ रहे हैं।

"कल शाम तक आप मेरे रुपये नहीं लौटायेंगे तो मैं गाँव के मुखिये से इसकी शिकायत करूँगा, समझें!" ये शब्द कहते पच्चीस साल का एक जवान घर से तेजी के साथ बाहर निकल गया।

अवंती ने घर में प्रवेश करके पूछा— "बाबू जी, यह झगड़ा कैसा?"

नीलकंठ खीझ कर बोला—"इन सारी बातों से तुम्हें क्या मतलब? तुम रसोई का काम देख लो!"

नीलकंठ की डांट सुनकर अवंती रो पड़ी। आध घंटे के बाद नीलकंठ अवंती के पास पहुँचा और शांत स्वर में बोला— "बेटी, अगले महीने में तुम्हारी शादी होगी। रिश्ता तो मुझे पसंद आया। दस हज़ार दहेज माँगते पिछले हफ़्ते में हमारे घर जो लोग आये थे, वही रिश्ता मैंने पक्का कर लिया।"

"बाबूजी, इतने सारे रुपये हम कहाँ से लायेंगे?" डरते-सहमते अवंती ने पूछा।

"ये सब बातें तुम मुझ से मत पूछो! समझीं!" यों कहकर खाट बिछा कर नीलकंठ लेट गया।

अवंती रसोई घर से निबट कर लौटी तो देखती क्या है। नीलकंठ गहरी नींद में है। उसने अपने पिता के संदूक को खोलकर देखा, चमड़े की थैली में रुपयों के बण्डल भरे थे। यह सोच कर अवंती अचरज में आ गई कि आखिर उसकी शादी करने के वास्ते उसके पिता चोरी करने पर तुले हैं! अवंती थैली को अपने तकिये के नीचे रख कर सो गई।

सवेरा होने पर वही युवक उनके घर आ धमका, उसे देखते ही अवंती का पिता गरज कर बोला–"मैंने तुम्हें दस दफ़े समझाया कि मैं तुम्हारे रुपयों के बारे में कुछ नहीं जानता। अब तुम जा सकते हो!"

युवक नाराज़ हो कुछ कहने को था, तभी अवंती दखल देते हुए बोली–"रुपयों को लेकर मेरे बाबूजी को आप क्यों तंग करते हैं? यह मुझे अच्छा नहीं लगता।"

"इसमें तंग करने की बात ही क्या है? मैं असली बात तुम्हें बता देता हूँ। मेरा नाम चन्द्रसेन है! मैं एक जौहरी के यहाँ मुंशी हूँ। एक दिन हमारे मालिक एक चमड़े की थैली में दस हज़ार रुपये भरकर व्यापार के काम पर दूकान से चल पड़े, फिर एक घंटे के अन्दर उदास चेहरा लिये हुए वापस चले आये। रास्ते में चोरों ने रुपयों की थैली चुरा ली थी। यह बात मालूम होने पर मुझे बड़ा दुख हुआ।

मेरे बड़े भाई शहर में रहते हैं। मुझे जब मालूम हुआ कि मेरे भाई की तबीयत खराब हो गई है, तब मैं उसी दिन रात को शहर के लिए चल पड़ा। मैं तालाब की मेंड के बगल वाले बगीचे से होकर जा रहा था, तब एक पेड़ की ओट में से दो आदमियों की बातचीत मुझे सुनाई दी। एक चोर कह रहा था–"यह धन हम दोनों में से किसी एक का हो जाएगा तो कम से कम वह एक साल तक चोरी किय

बिना आराम से अपनी जिंदगी काट सकता है! इसलिए हम एक काम करेंगे। इस थैली को हम यहाँ पर रखकर तालाब की मेंड पर चले जायेंगे! वहाँ से दौड़ कर जो आदमी इस थैली को पहले उठायेगा, यह थैली उसी की हो जाएगी! क्या तुम को यह शर्त मंजूर है?"

दूसरे चोर ने इस शर्त को मान लिया। इसके बाद दोनों उस थैली को वहीं पर छोड़ तालाब की मेंड पर चले गये। तब में पेड़ की ओट में से थैली के पास पहुँचा और उस थैली को देख चकित रह गया। क्योंकि वह थैली मेरे मालिक की थी! इस पर में उस थैली को लेकर भाग गया। दूर से चोरों ने मुझे देखा और वे मेरे पीछे पड़े। में दौड़ते-दौड़ते आखिर तुम्हारे गाँव में पहुँचा। गलियों में अभी तक लोगों की चहल-पहल शुरू नहीं हुई थी। मेरे मालिक की थैली चोरों के हाथ में न पड़े, इस ख्याल से मेंने उसे एक मकान के चबूतरे पर फेंक दिया, चबूतरे पर बांस की टट्टियाँ बंधी हुई थीं, थैली टट्टियों के पीछे जा गिरी।

इसके बाद में गाँव को पार कर थोड़ी दूर और भागा, इस बीच सवेरा हो गया। तब लाचार होकर चोर वापस चले गये। में सीधे शहर पहुँचा। मेरे भाई की तबीयत सुधर गई थी, तब में फिर तुम्हारे गाँव को लौट आया। मेंने इसी घर में थैली फेंका था। लेकिन नीलकंठजी बताते हैं कि वे उस थैली के बारे में कुछ नहीं जानते हैं! ये सफ़ेद झूठ बोल रहे हैं!"

ये बातें सुनने पर चन्द्रसेन की स्वामि-भक्ति पर अवंती को आश्चर्य हुआ। वह अपने तकिये के नीचे की थैली लाकर चन्द्रसेन के हाथ सौंपने को हुई। इस पर नीलकंठ उसे रोकते हुए बोला—"बेटी, तुम यह थैली इसके हाथ मत दो। यह जो कुछ बताता है, मनगढ़ंत कहानी है। सुनो, में बताता हूँ कि वह थैली कैसे मेरे हाथ आ गई है।"

नीलकंठ ने कहा–"मैं तुम्हारी शादी के वास्ते रुपये उधार लेने की कोशिश करके हार गया। मैं जिंदगी से निराश हो चुका था। मेरे मन में आया कि इकलौती बेटी की शादी न कर सका तो जीने से क्या फ़ायदा? यों सोचकर एक उजड़े हुए कुएँ की ओर मैं डगमगाते क़दमों से आगे बढ़ा। उस वक़्त मेरे पीछे एक आदमी चला आ रहा था। उसने मेरे मन की बात ताड़ ली, लपक कर मेरा कंधा थाम लिया और डांटकर मुझ से पूछा–"लगता है कि तुम आत्महत्या करने जा रहे हो! आखिर इसका कारण क्या है?"

मैंने अपनी आँखों में आँसू भर कर कहा–"मैं अपनी इकलौती बेटी की शादी नहीं कर पाया, मेरे जीने से क्या फ़ायदा?' मेरा जवाब सुनकर वह आदमी हँस पड़ा और बोला–"मैं दस लड़कियों की शादी करने की ताक़त रखता हूँ, लेकिन विचित्र बात तो यह है कि मेरे लिए कोई संतान ही नहीं है। ये रुपये मेरे नहीं, फिर भी तुम ले लो! तुम अपना पता दे दो, मैं हर महीने थोड़ा-थोड़ा करके तुम से वसूल कर लूँगा!" यों समझा कर उसने मेरे हाथ चमड़े की एक थैली धर दी।

"उसका नाम रघुनंदन है। वह जब मुझे रुपयों की थैली दे रहा था, तब चन्द्रसेन ने देखा होगा, और उसके दिल में ये रुपये हड़पने की लालच पैदा हुई होगी। बेटी, तुम इसकी बातों पर यक़ीन न करो।"

पड़ा। तुम्हारे गाँव तक पहुँचने-पहुँचते इस गली में जब घुसा, तभी पानी बरसना शुरू हो गया। मैं बरसात में भीगने से बचने के लिए तुम्हारे घर के चबूतरे पर पहुँचा, तभी मुझे इस टट्टी के बगल में एक थैली दिखाई दी। उसे खोलकर देखा, काफी रुपये भरे पड़े थे। घर पर ताला लगा था। मैंने सोचा कि इस मकान के लोग कहीं जाने की जल्दबाजी में शायद इस थैली को छोड़कर चले गये होंगे, इसलिए लौटती यात्रा में उनके हाथ सौंपा जा सकता है। यह सोचकर पानी के थमते ही मैं यहाँ से चल पड़ा।

रास्ते में एक उजड़े कुएँ की ओर बढ़ने वाले नीलकंठ को देखा, उसका सारा हाल जानकर मैंने यह थैली नीलकंठ के हाथ दे दी। उस वक़्त मैं नहीं जानता था कि यह थैली मुझे जिस घर के पास पड़ी मिली, वह घर नीलकंठ का है! मैं वहाँ से अपने गाँव चला गया। मैंने सोचा कि जिस मकान के पास यह थैली मुझे मिली, उसके मालिक को रुपये दे दूँ। इसी विचार से मैं आज रुपये लेकर यहाँ पहुँचा।"

इसके बाद रघुनंदन नीलकंठ से बोला-- "मैंने आपके हाथ जो थैली दी थी, वह जरूर चन्द्रसेन के मालिक की होगी। आप कृपया इसे चन्द्रसेन के हाथ सौंप दीजिए!

इस बीच रघुनंदन ड्योढ़ी तक पहुँचा, और मुस्कुराते हुए पूछा--"उस अंधेरी रात के वक़्त भी तुमने इस मकान का निशाना बना रखा है?"

इसके बाद नीलकंठ ने रघुनंदन का परिचय अपनी बेटी को दिया। अवंती ने सारी बातें रघुनंदन को सुनाकर बिनती की कि वे इस उलझन को सुलझाने की कृपा करें!

"यह कौन बड़ी बात है, बेटी! लो, मैं यह पहेली सुलझा देता हूँ।" फिर बोला-- "मैं अपने रिश्तेदारों के घर एक शादी में शामिल होने के लिए शहर जा रहा था! सूर्योदय के पहले ही मैं घर से निकल

में आपके होनेवाले दामाद के दहेज़ के दस हज़ार रुपये दे देता हूँ!" फिर चन्द्रसेन की ओर परख कर देखते हुए रघुनंदन ने नीलकंठ से पूछा—"क्या आपका होनेवाला दामाद इस युवक जैसा होगा?"

"लड़की देखने वह युवक जब आया था, उस वक़्त मुझे उसे परख कर देखने का मौक़ा नहीं मिला। उसके माँ-बाप ने दहेज़ के रूप में दस हज़ार मांगे, तब मैंने गूँगे आदमी की तरह सर हिलाया था। बस!" नीलकंठ ने रोष में आकर जवाब दिया।

रघुनंदन ने चन्द्रसेन का कंधा थपथपाते हुए कहा—"तुम्हारे मालिक जिस थैली को खोकर हाथ धो चुके थे, उसे फिर से उनके हाथ सौंपने के लिए तुमने जो मेहनत की और जो ईमानदारी दिखाई, उसे देख मैं बहुत प्रभावित हुआ। क्या तुम्हारी शादी हो गई? नहीं हुई तो कितना दहेज़ चाहते हो?"

फिर नीलकंठ की ओर मुड़कर पूछा—"नीलकंठजी, अवंती मान ले तो मैं आप से एक बात निवेदन करना चाहूँगा!" इस बीच चन्द्रसेन ने नीलकंठ और अवंती पर अपनी नज़र डाली। नीलकंठ ने चन्द्रसेन की तरफ़ वात्सल्य भरी दृष्टि दौड़ाई। अवंती लज्जा के मारे सर झुकाये धरती की ओर ताक रही थी।

चन्द्रसेन ने कहा—"अवंती अपनी शादी तक का ख्याल किये बिना रुपयों की थैली मुझे देने को हुई। उसका यह त्याग तारीफ़ के लायक़ है। दहेज़ को लेकर जब ये सारी घटनाएँ हुईं, ऐसी हालत मे मैं किस मुँह से दहेज की मांग कर सकता हूँ? मुझे दहेज़ नहीं चाहिए।"

रघुनंदन ने नीलकंठ और अवंती की ओर देखा, उन्हें प्रसन्नचित्त देख बोला—"अगले महीने में ही शादी का मुहूर्त होगा! पर शादी यहाँ नहीं, मेरे घर पर होगी! मेरे बच्चे नहीं हैं, अगर होते तो दस लड़कियों की शादी करने की मैं शक्ति रखता हूँ। यह बात मैंने नीलकंठ से पहले ही बता दी है। यही मेरा फ़ैसला है!"

कुत्ते की दुम

एक गाँव में राम सहाय नामक दूध का एक व्यापारी था। वह अकसर दूध में पानी मिला देता था। ग्राहकों ने कई बार उसे समझाया, मगर वह अपनी आदत से मजबूर था। आखिर गाँव के लोगों ने उसको गाँव से भगा दिया।

राम सहाय अपने गाँव को छोड़ कर आजीविका की खोज में चल पड़ा। उसे एक तालाब के किनारे की एक गुफा के सामने एक योगी दिखाई दिया।

राम सहाय ने योगी को प्रणाम किया, उनको अपनी सारी कहानी सुनाकर बोला–"साधू महाराज, अब मेरी अक्ल ठिकाने लग गई है। मुझ पर आप कृपा कीजिए।"

योगी को उस पर दया आ गई। उन्होंने राम सहाय को तालाब दिखा कर कहा–"आइंदा इस तालाब में पानी की जगह दूध रहेगा। तुम आराम से अपने दिन बिताओ।"

राम सहाय ने योगी को हाथ जोड़ कर प्रणाम किया और बोला–"साधू महाराज, आप इस दूध के तालाब के बाजू में दो पानी के तालाबों की सृष्टि कीजिए।"

विष्णु पुराण

क्षीर सागर में स्थित त्रिकूट पर्वत पर लोहे, चांदी और सोने की तीन चोटियां थीं। उन चोटियों के बीच एक विशाल जंगल था जिस में फलों से लदे पेड़ भरे थे। उस जंगल में गजेन्द्र नामक मत्त हाथी अपनी असंख्य पत्नियों के साथ विहार करते अपनी प्यास बुझाने के लिए एक तालाब के पास पहुंचा।

प्यास बुझाने के बाद गजेन्द्र के मन में जल-क्रीड़ाएँ करने की इच्छा हुई। फिर वह अपनी औरतों के साथ तालाब में उतर कर पानी को उछालते हुए अपना मनोरंजन करने लगा। इस बीच एक बहुत बड़े मगरमच्छ ने गजेंद्र के दायें पैर को अपने दाढ़ों से कसकर पकड़ लिया। इस पर पीड़ा के मारे गजेन्द्र चींकार करने लगा। उसकी पत्नियां घबड़ा कर तालाब के किनारे पहुंचीं और अपने पति के दुख को देख आंसू बहाने लगीं। उनकी समझ में न आया कि गजेन्द्र को मगरमच्छ की पकड़ में से कैसे छुड़ावे?

गजेन्द्र भी मगरमच्छ की पकड़ से अपने को बचाने के सारे प्रयत्न करते हुए छटपटाने लगा। गजेन्द्र अपने दांतों से मगरमच्छ पर वार कर देता और मगरमच्छ उछल कर हाथी के शरीर को अपने तेज नाखूनों से खरोंच लेता जिस से खून की धाराएँ निकल आतीं।

हाथी मगरमच्छ की पीठ पर अपनी सूंड चलाता, मगरमच्छ अपनी खुरदरी

पूंछ से हाथी पर वार कर देता। अगर हाथी अपने चारों पैरों से मगरमच्छ को कुचलने की कोशिश करता तो वह पानी के तल में जाकर छिप जाता। इस पर हाथी किनारे पर पहुंचने के लिए आगे बढ़ता, तब झट से मगरमच्छ हाथी को पकड़ कर खींच ले जाता और उसे पानी में डुबो देता। इस तरह मगरमच्छ और हाथी के बीच एक हज़ार साल तक लगातार लड़ाई चलती रही।

गजेन्द्र अपनी ताक़त पर विश्वास करके हिम्मत के साथ लड़ता रहा, फिर भी धीरे-धीरे उसकी ताक़त घटती रही। मगरमच्छ तो पानी में जीने वाला प्राणी है! पानी के अन्दर उसकी ताक़त ज्यादा होती है! वह हाथी का ख़ून चूसते दिन ब दिन मोटा होता गया। हाथी कमज़ोर हो गया। अब सिर्फ़ उसका कंकाल मात्र रह गया। मगरमच्छ की पकड़ से अपने को बचा लेना हाथी के लिए मुमकिन न था।

आख़िर गजेन्द्र दुखी हो सोचने लगा—"मैं अपनी प्यास बुझाने के लिए यहाँ पर आया। प्यास बुझाने के बाद मुझे यहाँ से चला जाना चाहिए था! मैं नाहक़ क्यों इस तालाब में उतर पड़ा? मुझे कौन बचायेगा? फिर भी मेरे मन के किसी कोने में यह यक़ीन जमता जा रहा है कि मैं किसी तरह बच जाऊँगा। इसका मतलब है कि मेरी आशा का कोई आधार ज़रूर होगा। उसी को मैं ईश्वर कहकर पुकारता हूँ।"

देवता, भगवान, ईश्वर नामक भावना का मूल बने हे प्रभू! तुम्हीं सभी कार्य-कलापों के कारण भूत हो!

मुझ जैसे घमण्डी प्राणी जब तक खतरों में नहीं फँसते, तब तक तुम्हारी याद नहीं करते! दुख न भोगने पर तुम्हारी जरूरत का बोध नहीं होता! तुम तब तक दिखाई नहीं देते, जब तक कि जो यह मानता है कि तुम हो, फिर भी उसके मन में यह खलबली नहीं मचती कि तुम हो या नहीं!

इस तरह बराबर सोचनेवाले गजेन्द्र को लगा कि मगरमच्छ के द्वारा सताने वाली पीड़ा कुछ कम होती जा रही है!

गजेन्द्र ने जब ध्यान करना शुरू किया, तभी मगरमच्छ के दाढ़ों के मसूड़ों में पीड़ा शुरू हुई। उसका कलेजा कांपने लगा। फिर भी वह रोष में आकर गजेन्द्र के पैर को नोच-नोचकर चबाने लगा।

"प्राणियों की बुराई और पीड़ा को तुम हरने वाले हो। तुम सब जगह फैले हुए हो! देवताओं के मूल रूप हे भगवान! इस दुनिया की सृष्टि के मूल भूत कारण तुम हो। मैं यह विश्वास करता हूँ कि मेरी रक्षा करने के लिए मैं जितनी तीव्रता और भक्ति के साथ तुम से प्रार्थना करता हूँ, तुम उतनी जल्दी मेरी रक्षा कर सकते हो!

सब प्रकार के रूप धरते वाणी और मन से परे रहने वाले हे ईश्वर! ऐसे अनाथों की रक्षा करने वाली जिम्मेदारी तुम्हारी ही है न?

प्राण शक्तियाँ मेरे भीतर से जवाब दे चुकी हैं! मेरे आँसू सूख गये हैं? मैं ऊँची आवाज में तुम को पुकार भी नहीं सकता हूँ! मैं अपना होश-हवास भी खोता जा रहा हूँ! चाहे तुम मेरी रक्षा करो या छोड़ दो, यह सब तुम्हारी इच्छा पर निर्भर है। मेरे अंदर सिर्फ़ तुम्हारे ध्यान को छोड़ कोई भावना नहीं है। मुझे बचाने वाला भी तुम्हारे सिवाय कोई नहीं है!" यों गजेन्द्र अपनी सारी ताक़त बटोर कर सूंड उठाये आसमान की ओर देखने लगा!

मगरमच्छ को लगा कि उसकी ताक़त जवाब देती जा रही है! उसका मुँह खुलता जा रहा है। उसका कंठ बंद होता जा रहा है।

उधर हाथी की आँखें इस तरह बंद होने लगीं कि उसे अपने अस्तित्व का ही बोध न था। वह एक दम अचल खड़ा रह गया।

उस हालत में विष्णु आ पहुँचे । सारा आसमान उनके स्वरूप से भर उठा । गजेन्द्र को लगा कि वह एक अत्यंत सूक्ष्म कण है ।

विष्णु ने अपना चक्र छोड़ दिया । अभय मुद्रा में अपना हाथ फैलाया । बड़ी तेज गति के साथ चक्कर काटते विष्णु-चक्र ने आकर मगरमच्छ का सर काट डाला ।

दर असल मगरमच्छ एक गंधर्व था । उसका नाम 'हुहू' था । प्राचीन काल में देवल नामक एक ऋषि पानी में खड़े होकर तपस्या कर रहे थे, तब मगरमच्छ की तरह पानी में छिपते आकर गंधर्व ने उनका पैर पकड़ लिया । इस पर ऋषि ने उसे शाप दे डाला कि तुम मगरमच्छ की तरह इस पानी में पड़े रहो ! अब विष्णु-चक्र के द्वारा उसका शाप जाता रहा ।

मगरमच्छ से छुटकारा पानेवाले गजेन्द्र को तालाब से बाहर खींच कर विष्णु ने अपनी हथेली से उसके कुंभ-स्थल पर फेरा । उस स्पर्श की वजह से गजेन्द्र अपनी खोई हुई ताक़त पाने के साथ अपने पूर्व जन्म का भी ज्ञान प्राप्त कर सका ।

गजेन्द्र पिछले जन्म में इंद्रद्युम्न नामक एक विष्णुभक्त राजा थे । विष्णु के ध्यान में मग्न उस राजा ने एक बार ऋषि अगत्स्य के आगमन का ख्याल न किया । ऋषि ने क्रोध में आकर उसे शाप दिया कि तुम अगले जन्म में मत्त हाथी बनकर पैदा हो जाओगे । उसी दिन गजेन्द्र के रूप में पैदा होकर उसने मुक्ति प्राप्त की ।

गजेन्द्र मोक्ष की कहानी नैमिशारण्य में होनेवाले सत्र याग में पधारे हुए शौनक आदि मुनियों को सूत महर्षि ने सुनाई ।

मुनियों ने सूत महर्षि से कहा—"मुनिवर, गजेन्द्र मोक्ष की कहानी हमें तो सिर्फ़ एक हाथी की जैसी मालूम नहीं होती, बल्कि सारे प्राणि कोटि से संबंधित मालूम होती

है। खासकर कई बंधनों और मुसीबतों में फँसकर तड़पनेवाले मानव जीवन से संबंधित लगती है।"

इसके जवाब में सूतमहर्षि बोले–"हाँ, गजेन्द्र मोक्ष की कहानी श्लेषार्थ से भरी हुई है। उसका अन्वय जो जिस रूप में चाहे कर सकता है। काल तो विष्णु के अधीन में है। इसलिए काल-चक्र के परिभ्रमण में कई कठिनाइयाँ और समस्याएँ हल होती जाती हैं।"

मुनियों ने पूछा–"मुनिवर, गजेन्द्र मोक्ष के आधार पर हमें यह मालूम होता है कि प्रत्येक कार्य का कारणभूत सर्वेश्वर विष्णु हैं। ऐसे महाविष्णु की कहानी पूर्ण रूप से सुनने की इच्छा हमारे मन में जाग रही है। हम आप के सामने बच्चों के समान हैं। इसलिए हम आप से प्रार्थना करते हैं कि आप हमारी समझ में आने लायक़ सरल शैली में विष्णु कथा की सारी बातें समझा दें। आप ने महर्षि व्यास के द्वारा समस्त पुराण, इतिहास और उनके मर्म को ही जान लिया है। इसलिए आप ही वे कहानियाँ सुनाकर हम को कृतार्थ कर सकते हैं।"

मुनियों की बातें सुनकर सूत मुनि खुश हुए और बोले–"हाँ, जरूर सुनाऊँगा। महर्षि व्यास ने विष्णु से संबंधित अनेक लीलावतारों की विशेषताओं को महा भागवत के रूप में रचा और अपने पुत्र शुक को सुनाया। विष्णु पुराण सुनकर भव सागर से तरने की इच्छा रखनेवाले महाराजा परीक्षित को शुक महर्षि ने सुनाया। गजेन्द्र की रक्षा करने के लिए प्रकट हुए विष्णु का अवतार आदि मूलावतार माना गया।

भगवान विष्णु ने कई अवतार लिए; उनमें विकास की दशाओं के अनुसार दशावतार नाम से प्रसिद्ध दस अवतार ज्यादा मुख्य हैं।

नार का अर्थ नीर है, जल है। विष्णु जल के मूल हैं, इसलिए वे नारायण

कहलाये। नारायण से ही नीर या जल का जन्म हुआ। जल से प्राणी पैदा हुए। विष्णु जलचर बने मछली के रूप में अवतरित हुए, दशावतारों में वही मत्स्यावतार पहला है।

विष्णु जल से भरे नील मेघ के रंग के होते हैं। मेघ के अंदर जैसे बिजली छिपी हुई है, उसी प्रकार विष्णु स्वयं तेजोमय है, उनके भीतर से उत्पन्न जल भी तेज से भरे रहकर गोरे रंग का प्रकाश बिखेरता रहता है। वही जल कारणोदक क्षीर सागर है।

क्षीर सागर में अनंत रूपी काल (समय) शेषनाग के रूप में कुंडली मारे लेटा रहता है। शेषनाग के एक हजार फण हैं। अंत विहीन शेषनाग पर शेषशायी के रूप में विष्णु लेटे रहते हैं, तब उनकी नाभि में से एक लंबे नाल के साथ एक पद्म ऊपर उठा। उसी पद्म के भीतर से ब्रह्मा का उदय हुआ। ब्रह्मा ने सभी प्राणियों की सृष्टि की।

अनंतकाल युगों के रूप में चलता रहता है। कृत, त्रेता, द्वापर और कलियुग–ये चारों मिलकर एक महा युग होता है।

एक हजार महायुग मिलकर एक कल्प होता है। एक कल्प ब्रह्मा का एक दिन होता है (रात का वक़्त इसमें शामिल नहीं है) दिन के समाप्त होते ही उन्हें नींद आ जाती है। वही कल्पांत है। उस वक़्त चारों ओर गहरा अंधेरा छा जाता है। विष्णु से निकली संकर्षण की अग्नि सब को जला देती है। झंझावात चलने लगते हैं, तब भयंकर काले बादल हाथी की सूंडों जैसी जलधाराएँ लगातार गिरने लगती हैं। महासमुद्र में आसमान छूने लायक़ उफान होता है। भू, भुवर और स्वर्ग लोक डूब जाते हैं। चारों तरफ़ जल को छोड़ कुछ दिखाई न देगा। इस प्रकार प्रलय पैदा होगा। ब्रह्मा के सोने की रात प्रलयकाल है।

वही कल्पांत के समीप का समय है।

Sankar
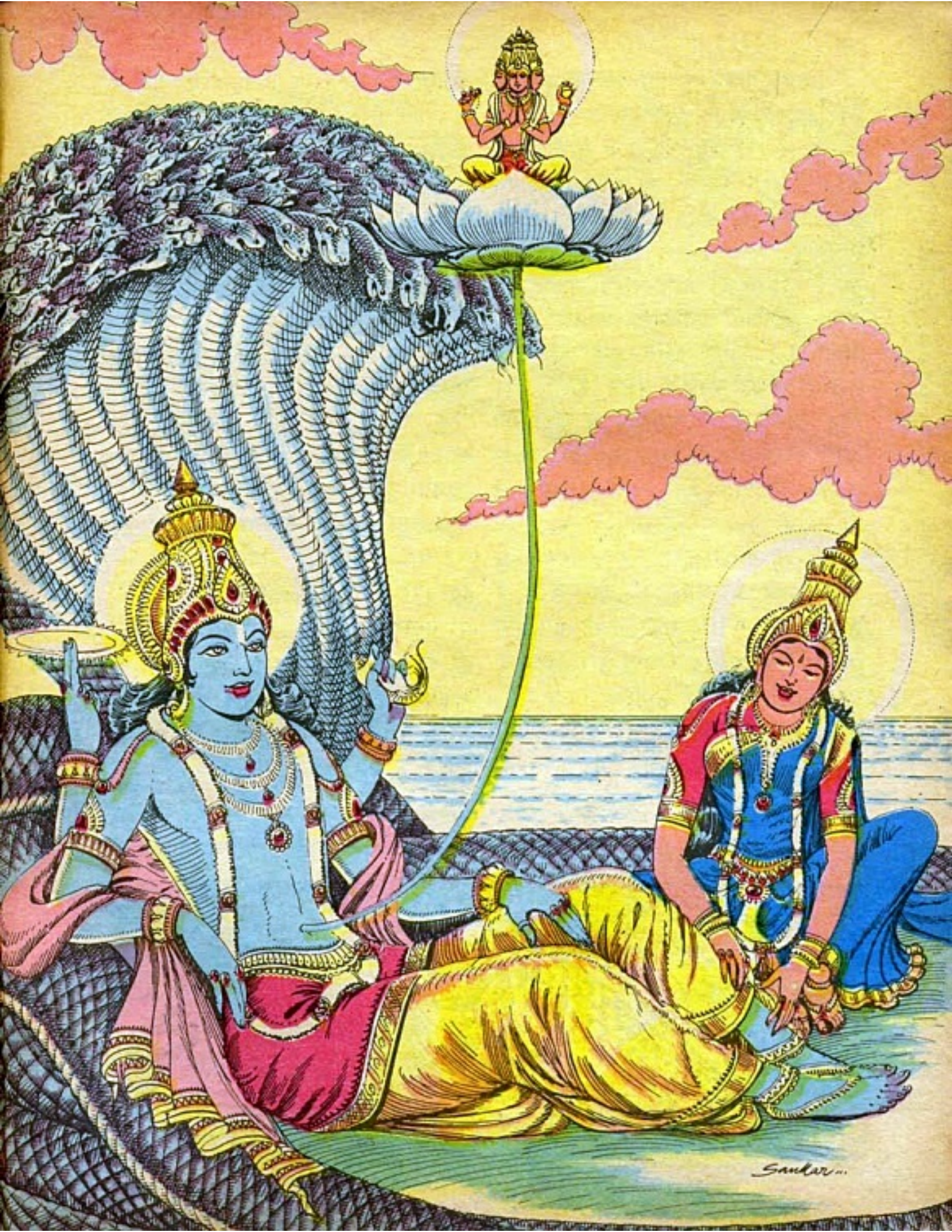
सत्यव्रत नामक राजर्षि नदी में नहाकर नारायण का ध्यान करके जब वे अर्घ्य देने को हुए तब उनकी अंजुली में सोने के रंग की एक छोटी मछली आ गई। सत्यव्रत उस मछली को नदी में छोड़ने जा रहे थे, तब वह मछली बोल उठी—"हे राजन, हमारी मछली की जाति अच्छी नहीं होती, छोटी मछलियों को बड़ी मछलियाँ खा जाती हैं। अगर उनसे बच भी जाये, मछुआरे जाल फेंककर पकड़ लेते हैं और मार डालते हैं। इसलिए मैं आप की शरण माँगने अंजुली में आ गई हूँ। आप कृपया निर्दयतापूर्वक मुझे छोड़ न दीजियेगा।"

सत्यव्रत मछली को अपने कमंडलु में रखकर अपने नगर में ले गये। वे महाराजा के रूप में राज्य करते हुए बड़ी तपस्या किये हुए एक राजर्षि हैं। विष्णु के परम भक्त थे। बड़े ज्ञानी थे।

कमण्डलु के भीतर वाली छोटी मछली दूसरे दिन तक बड़ी हो गई और छटपटाते आर्तनाद करने लगी—"महाराज, मुझ को कमण्डलु से निकाल कर बड़ी जगह पहुँचा दीजिए।"

इस पर मछली को बड़े नांद में छोड़ दिया गया। वह थोड़ी ही देर में बहुत बड़ी मछली हो गई, तब सत्यव्रत ने उसे एक तालाब में डाल दिया। मछली बराबर बढ़ती गई, तब उसे तालाब से बड़ी नदी में, नदी में से समुद्र में पहुँचाया गया, इस पर मछली ने पूछा—"हे राजर्षि, मैं आप की शरण में आया हूँ। आप के द्वारा मैं अपनी रक्षा चाहती हूँ। ऐसी हालत में क्या आप मुझे समुद्र में छोड़ कर चले जायेंगे? क्या यह अन्याय नहीं है? क्या मगरमच्छ और तिमिंगल मुझ को निगल नहीं जायेंगे?"

सत्यव्रत ने कहा—"हे महामीन, बताओ, मैं इससे बढ़कर तुम्हारे लिए क्या कर सकता हूँ? पल भर में सौ योजन बढ़ने वाले तुम को कोई प्राणी निगल नहीं सकता है न?"

हत्यारे

सदियों के पहले की बात है। चीन देश में एक दर्जी रहा करता था। वह विनोद प्रिय था। फ़ुरसत के वक़्त अपनी पत्नी को साथ ले शहर में घूमा करता था।

एक बार वह शहर का चक्कर काट कर शाम को घर लौट रहा था, उसे रास्ते में एक नाटा आदमी दिखाई दिया। वह तरह-तरह के कौतुक करके लोगों को हंसा देता था। सब के साथ दर्जी और उसकी औरत भी हंसते-हंसते लोट-पोट हो गये। रात को उसे अपने घर दावत पर बुलाया।

नाटे को घर पर बिठा कर दर्जी दूकान को चल पड़ा। तली हुई मछलियाँ, रोटियाँ, नींबू, सफ़ेद तिलों का बना हल्वा वगैरह खरीद लाया। सब एक साथ खाने के लिए मेज पर बैठ गये।

एक-एक करके सारी चीजें शौक से खाते जा रहे थे। दर्जी की पत्नी ने मछली का एक बड़ा टुकड़ा नाटे के मुंह में ठूंस कर उसका मुंह जोर से बंद किया। तब बोली-"सुनो, तुम्हें सारा टुकड़ा एक ही दफे निगलना होगा!" नाटे ने बड़ी मुश्किल से उसे निगलने की कोशिश की। मगर बद क़िस्मती की बात यह थी कि उस टुकड़े के अन्दर बड़ा कांटा था, जो नाटे के गले में चुभ गया। इसपर उसकी आँखें निकल आईं और वह अचेत हो गया। उसकी यह हालत देख दर्जी चीख उठा-"अरे अल्लाह! बेचारे इसकी जान मेरे हाथों से निकल गई।"

"अब रोने-धोने से फ़ायदा ही क्या है? हमें तो आगे की बात सोचनी है।" दर्जी की बीबी ने समझाया।

"बताओ, अब हम क्या करें? लेकिन ऐसा उपाय बताओ, जिससे हम मुसीबत में न फँसे।" दर्जी ने अपनी औरत से पूछा।

"इस पर कपड़ा ओढ़ा कर कंधे पर उठा लो, हम अपने बेटे के बीमार हो जाने का स्वाँग रचते वैद्य की खोज में चल पड़ेंगे।" तरक़ीब बता दी।

दर्जी ने नाटे के बदन पर एक कपड़ा ओढ़ा दिया, उसे उठाकर गली में आ पहुँचा। उसकी बीबी आगे चलते जोर-शोर से दहाड़े मार कर रोने लगी–"या खुदा, मेरे बच्चे को कमबख्त चेचक हो गया है। कोई वैद्य मिल जाय तो क्या ही अच्छा होगा।"

चेचक का नाम सुनते ही गली में से गुजरने वाले दूर हट गये। दर्जी की बीबी ने उन लोगों से पूछा–"भाइयो, वैद्या का घर कहाँ पर है?" रास्ते से गुजरनेवालों में से एक ने उन्हें वैद्य का घर दिखाया।

दर्जी ने जाकर वैद्य के घर पर दस्तक दी। एक नीग्रो गुलाम औरत ने आकर दर्वाजा खोला। दर्जी की बीबी उससे बोली–"मेरा बच्चा बहुत बीमार है! वैद्यजी से जल्दी जांच करने को कह दोगी?" इन शब्दों के साथ उसने गुलाम औरत के हाथ में चाँदी का एक सिक्का धर दिया।

वैद्यजी को यह खबर देने गुलाम औरत छत पर चली गई। इस बीच दर्जी दंपति ने नाटे की लाश को सीढ़ियों पर रख दिया और वहाँ से भाग खड़े हुए।

इस बीच नीग्रो गुलाम औरत ने वैद्य के हाथ में चांदी का सिक्का देकर मरीज़ के आने की सूचना दी। सिक्के को पाने की खुशी में वैद्य दीपक तक लेने की बात भूल गया, जल्दबाजी में सीढ़ियाँ उतरते लाश पर लात मार दी। लाश सीढ़ियों पर लुढ़कते आकर नीचे गिर पड़ी। वैद्य ने नीचे पहुँच कर देखा, तो वह लाश थी।

वैद्य ने सोचा कि यह हत्या उसीने की है, अब वह घबरा कर सोचने लगा कि लाश को क्या किया जाय। आखिर उस लाश को अपनी पत्नी के पास ले जाकर उसको सारा किस्सा सुनाया।

वैद्य की पत्नी ने कहा–"हम इस लाश को घर के अंदर ज़्यादा देर नहीं रख सकते; इसे अभी छत पर ले जाकर हमारे पड़ोसी के पिछवाड़े में गिरा देंगे। उस मकान का मालिक सुलतान के रसोई घर का अधिकारी है। उसके घर में चूहे, बिल्लियों और कुत्तों की भरमार है। वे सब मिलकर मिनटों में लाश को खा जायेंगे।" वैद्य की पत्नी ने उपाय बताया।

इसके बाद पति-पत्नी छत पर पहूँचे। इस तरह लाश को नीचे उतारा कि वह पड़ोसी के रसोई घर की दीवार से सट कर रहे। तब संतोष की सांस ली, मानों उनका पिंड छूट गया हो।

थोड़ी देर बाद पड़ोसी मकान का मालिक घर लौट आया, मोम बत्ती जला कर उसकी रोशनी में देखा कि कोई उसके रसोई घर की दीवार से सट कर हिले-डुले बिना खड़ा हुआ है।

बात यह थी कि अकसर उसके रसोई घर की कई चीज़ें गायब हुआ करती थीं, लेकिन वह सोचता था कि बिल्ली या कुत्ते उन चीज़ों को हड़प ले जाते हैं। अब उसके दिमाग में यह बात कौंध गई। वह सोचने लगा–"उफ़! यह आदमी वही चोर है! बगल के मकान से वह नीचे उतर आया है।" यों सोचकर उसने एक लाठी हाथ में ली और नाटे आदमी पर लाठी का प्रहार किया। लेकिन इस से वह खुश न हुआ, वह लगातार लाश पर लाठी चलाने लगा।

कई बार पीटने पर 'चोर' चूँ तक न करता था। इस पर उसने झुक कर जांच की, तो उसे पता चला कि उसने दम तोड़ दिया है।

वह चीखने लगा–"अरे नाटे, तुमने मेरा सत्यानाश किया! मेरे घर में चोरी करके तुमने मुझे नुकसान ही नहीं पहुँचाया, बल्कि मर कर मेरी जान पर आफ़त ढा दी है। हे खुदा, तुम्हीं अब मुझे बचा लो।"

इसके बाद वह उस शव को ढो कर ले गया, एक दूकान के सामने लाश को खड़ा करके अपने घर चल दिया। तब तक काफी रात बीत चुकी थी।

थोड़ी देर बाद एक महाजन शराब पीकर उसके नशे को दूर करने के लिए नहाने के वास्ते गुस्लखाने की ओर जाते उधर से आ निकला। नाटे को देखते ही महाजन को लगा कि खड़ा हुआ वह आदमी कोई चोर होगा। वह यह चिल्लाते–"चोर है, डाकू है! इसे पकड़ लो।" उस पर हमला कर बैठा। फिर उस लाश को नीचे गिरा कर बुरी तरह से पीटने लगा।

शराबी की चिल्लाहट सुनकर रात के वक़्त पहरा देनेवाले लोग दौड़े आ पहुँचे, उन लोगों ने देखा कि नीचे गिरा हुआ आदमी एकदम अचेत है!

पहरेदार बोले–"तुमने इस आदमी की हत्या की है! चलो थाने में!" ये बातें कहकर वे लोग नाटे की लाश और महाजन को भी कोत्वाल के पास ले गये।

सारा हाल जानकर कोत्वाल ने महाजन को सवेरा होते ही फाँसी पर चढ़ा देने की अपने सिपाहियों को आज्ञा दे दी।

सवेरे तक सारे शहर में महाजन की फाँसी की बात ढिंढोरा पीटकर फैला दी गई। वध्य स्थान पर लोगों की भारी भीड़ जमा हो गई। सिपाहियों ने महाजन को फाँसी के तख्ते पर चढ़ाकर उसके गले में फाँसी का फंदा लगाया।

इस बीच सुलतान के रसोई घर का अधिकारी दौड़े-दौड़े वहाँ आ पहुँचा और बोला–"रुक जाओ! उस नाटे आदमी की हत्या मैंने की है।"

कोत्वाल ने उससे पूछा–"तुमने यह हत्या क्यों की?"

रसोई घर के अधिकारी ने सारा वृत्तांत सुनाया। इस पर कोत्वाल ने अपने सिपाहियों को आदेश दिया–"इस आदमी ने अपनी गलती मान ली। इसलिए

महाजन को छोड़कर इसको फांसी पर चढ़ा दो।"

इतने में वहाँ पर वैद्य आया, बोला—"दर असल सच्चा हत्यारा मैं हूँ।" इन शब्दों के साथ उसने अपनी कहानी सुनाई। तब कोतवाल ने वैद्य को फाँसी देने का आदेश सुनाया।

सिपाही लोग वैद्य को फाँसी के तख्ते पर चढ़ाने वाले थे, तभी वहाँ पर दर्जी दौड़ा-दौड़ा आया और उसने अपने को हत्यारा बताकर सारी कहानी सुनाई।

कोतवाल ने कहा—"अब तो असली हत्यारे का पता चल गया है। इस दर्जी को फाँसी दे दो।"

लेकिन इस बार भी दर्जी को फांसी पर चढ़ाने में अडचन पैदा हो गई। वास्तव में वह नाटा आदमी सुलतान का विदूषक था। पिछले दिन विदूषक कहीं चला गया, फिर लौटकर न आया। इसलिए सुलतान ने दूसरे दिन सवेरे ही उसके बारे में तहक़ीक़ात की, सुलतान को मालूम हुआ कि एक नाटा आदमी मर गया है और चार आदमी अपने को हत्यारे बताते लड़ रहे हैं। इस पर सुलतान ने कोतवाल के पास यह ख़बर भेजी कि नाटे आदमी की लाश और चारों हत्यारों को उनके पास भिजवा दे।

अपने को हत्यारे बतानेवाले चारों आदमियों ने अपनी अपनी सच्ची कहानी बता दी। सबकी कहानियाँ सुननेवाले नाई वैद्य ने नाटे आदमी की लाश की जाँच की और बताया—"हुज़ूर! विदूषक के बदन में अभी जान है, यह मरा नहीं है।" इसके बाद विदूषक का मुंह खोलकर एक चिमटे से गले में फंसे कांटे को बाहर निकाला। दूसरे ही पल में नाटा आदमी जोर से छींककर उठ बैठा। तब अपना मुंह पोंछते खड़ा हो गया।

इस तरह चारों आदमियों की जानें बच गईं। सुलतान ने नाई वैद्य को बहुत बड़ा इनाम दे दिया। हत्यारे भी सुलतान के यहाँ से इनाम पाकर अपने अपने घर लौट गये।

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार ५०)

पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ अप्रैल १९८३ के अंक में प्रकाशित की जायेंगी।

.Shantaram

★

Mohan D. Desai

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्दों की हों और परस्पर संबंधित हों।

★ फ़रवरी १० तक परिचयोक्तियाँ प्राप्त होनी चाहिए, उसके बाद प्राप्त होनेवाली परिचयोक्तियों पर विचार नहीं किया जाएगा।

★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) ५० रु. का पुरस्कार दिया जाएगा।

★ दोनों परिचयोक्तियाँ कार्ड पर लिखकर (परिचयोक्तियों से भिन्न बातें उसमें न लिखें) निम्नलिखित पते पर भेजें: **चन्दामामा फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता, मद्रास-२६**

दिसंबर के फोटो-परिणाम

प्रथम फोटो : नन्हा मैं, खत डालूं कैसे?

द्वितीय फोटो : चिंता क्या, वाहक हम जैसे!!

प्रेषिका : शशि, C/o डा. शशि गोयल चिदम्बरा, जवाहर का बंगला रोड खंदारी, आगरा।

पुरस्कार की राशि रु. ५० इस महीने के अंत तक भेजी जाएगी।

Printed by B. V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for CHANDAMAMA CHILDREN'S TRUST FUND (Prop. of Chandamama Publications) 188, Arcot Road, Madras-600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.

चन्दामामा के ग्राहकों को सूचना

यदि आप अपना पता बदल रहे हों, तो पांचवीं तारीख़ से पहिले ही अपनी ग्राहक-संख्या के साथ, अपना नया पता सूचित कीजिये। यदि विलम्ब किया गया, तो अगले मास तक हम नये पते पर 'चन्दामामा' न भेज सकेंगे।

आपके सहयोग की आशा है।

डाल्टन एजन्सीस, मद्रास -६०० ०२६

बिंदुओं का खेल

राजू केनरा बैंक के अपने बचत खाते से पैसा लेता है। इस बार वह क्या खरीदने जा रहा है, आप खुद जान लें। अंक के अनुसार बिंदुओं को मिलाते जाएँ और स्वयं देख लें।
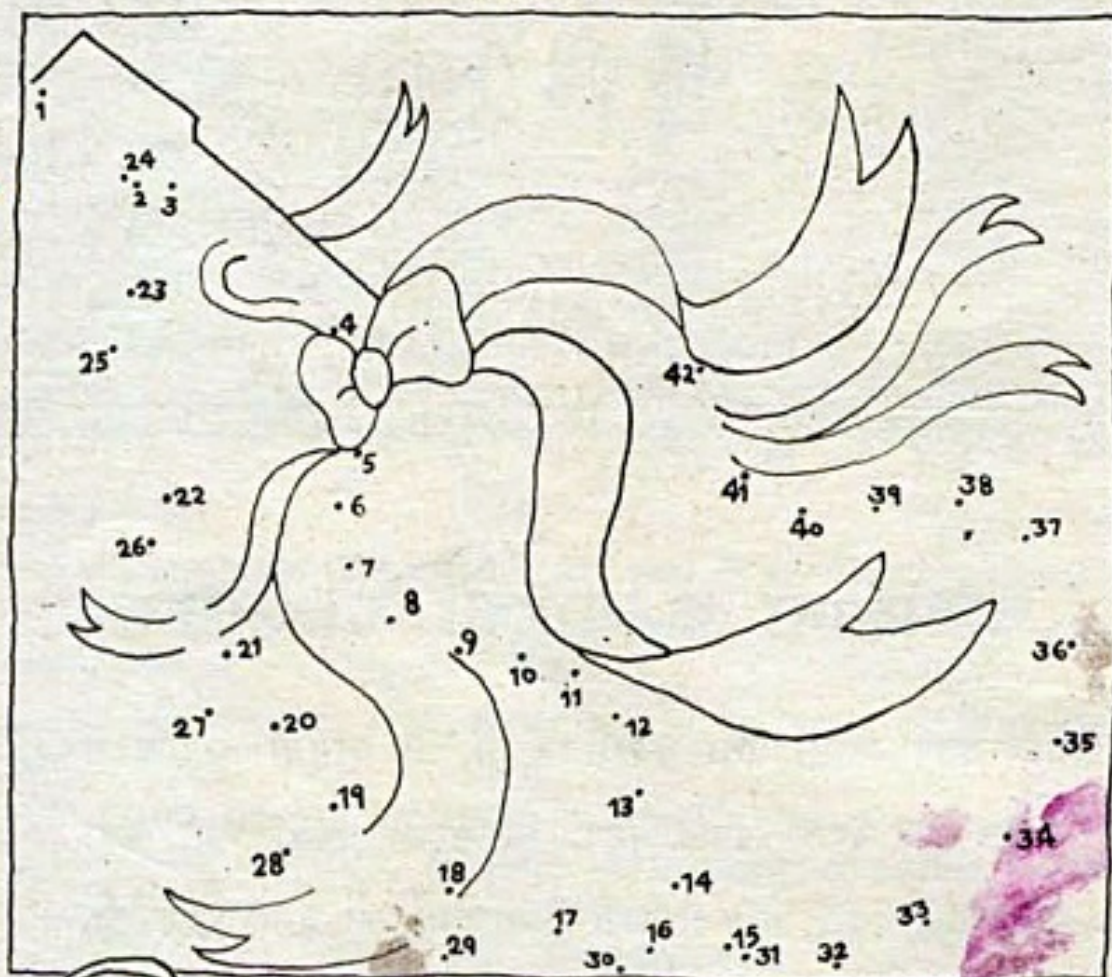
होनहार छात्रों की जय हो।

होनहार छात्र बनें। महत्वाकांक्षी हों। और याद रखें कि केनरा बैंक ऋण देकर उच्च शिक्षा के लिए आप जैसे लोगों की मदद करेगा।

आप एक नाबालिग हैं। तो क्या?

अपनी मम्मी या पापा से कहें कि केनरा बैंक में आपके लिए एक खाता खोल दें। अगर आप 14 वर्ष के हैं तो खुद खाता खोल सकते हैं और परिचालन कर सकते हैं। आएँ और उसका पूरा-पूरा मज़ा लें। मात्र रु. 5/- के साथ आज ही आप शुरू कर सकते हैं।

विद्यानिधि

क्या आप डाक्टर, इंजिनियर, या वैज्ञानिक बनना चाहते हैं?

तो, विद्यानिधि उसका जवाब है। मम्मी और पापा से आज ही एक खाता खोलने के लिए कहें। आपकी उच्च पढ़ाई चिंता से मुक्त रहेगी।

बालक्षेम

होशियार बच्चे अपने सभी जेबी-पैसे खर्च नहीं कर देते। उनमें से थोड़ा वे केनरा बैंक के टी. बी. बॉक्स में रखते हैं। आप भी होशियार बनें। मम्मी और पापा से केनरा बैंक में एक बालक्षेम खाता खोलने के लिए कहें। टी. बी. बॉक्स में सिक्के डालना शुरू करें और अपने पैसे को बढ़ते हुए पाएँ। आपके सभी सपने साकार होंगे।

पिछले महीने
संपन्न रंगाई प्रतियोगिता
का परिणाम :

I PRIZE
Master Hemchandra
Vineeta Paper Backs
905, Near Officer's Rest House
Achnera (Agra District)

II PRIZE
Master Arup Datt
C/o Ashis Datt
2, M. Biswas Street
P.O. Krishnagar
Dist. Nadia—741 101
West Bengal

III PRIZE
Master Chunu Datta
C/o Nitya Gopal Dutta
Kathuria Para
P.O. Krishnagar
Dist Nadia
West Bengal

Plus one hundred consolation prizes

केनरा बैंक से
मुफ्त
स्टिक्कर्स

maa(s) CB 9 Hin a 82